ॐ

मानस
श्रीरामायण - प्रश्नोत्तरार्थ प्रकाश

रमाकान्त सिंह

श्रीमद्गोस्वामि तुलसीदास-कृत

* * *

श्रीमानसरामायण-प्रश्नोत्तरार्थ-प्रकाश

प्रकाशक

नवलकिशोर-प्रेस, लखनऊ

श्रीसीतारामाभ्यां नमः

श्रीमते रामानंदाय नमः

श्रीमद्गोस्वामि तुलसीदास-कृत

[मा]नसरामायणप्रश्नोत्तरार्थप्रकाश

जिसको

[श्र]ीअयोध्यांतर्गत श्रीजानकीघाट-निवासी
निखिलशास्त्रनिष्णात महात्मा श्री १०८
पं० रामवल्लभाशरणजी महाराज

के शिष्य

श्रीसियारामलषणदासजी रामायणी ने रचा

उसीको

[द]ानापुर-पटना-निवासी श्रीरामदुलारीशरणजी से

प्राप्तकर

श्रीकेसरीदास सेठ, सुपरिंटेंडेंट

[मुंशी] नवलकिशोर-प्रेस, लखनऊ ने छापकर प्रकाशित किया

तुलसी-संवत् ३००

[प्रथम]ावृत्ति] १९२३ [१००० प्रति

श्रीमद्गोस्वामि तुलसीदासजी महाराज ।

निवेदन

श्री १००८ श्रीमत्परमाचार्य परमविज्ञानकमलप्रभाकर अशेषकविकुलतिलक जगदाधार श्रीमद्गोस्वामि तुलसीदासजी महाराज ने श्रीरामचरितमानस की रचना करके, जीवों के कल्याण के लिये, रामचरित के अंतर्गत एक ऐसी अमृत की धारा प्रवाहित की है कि उसका पान करके असंख्य जीव इस संसार-सागर से पार हो गए हैं। श्रीगोस्वामीजी ने नहीं मालूम किस पवित्र मुहूर्त में इस चमत्कारिक ग्रंथ में हाथ लगाया था कि जब से इस ग्रंथ का निर्माण हुआ है, तब से आज तक, इस पर, न जाने कितने भाष्य, तिलक, टीकाएँ और व्याख्याएँ हो चुकी हैं कि उनकी ठीक संख्या बताना कठिन है। हिंदी के भाष्य-तिलकों का कहना ही क्या है, हिंदी का तो यह सर्व-श्रेष्ठ और सर्व-शिरोमणि ग्रंथ ही ठहरा; हिंदी के अतिरिक्त बँगला, मराठी, गुजराती, उड़िया, उत्कल, कनारी, मैथिल, पंजाबी, उर्दू, अँगरेज़ी, संस्कृत आदि, भारतवर्ष में बोली जानेवाली प्रायः समस्त भाषाओं में, इस पवित्र ग्रंथ के कई-कई गद्य-पद्य अनुवाद हो चुके हैं और होते जा रहे हैं। इन टीका और भाष्यकारों में किसी ने तो दोहा-चौपाइयों का अन्वय करके सीधा-सीधा अर्थ कर दिया है; किसी ने उस अर्थ के साथ ग्रंथांतर के अनेक प्रमाण देकर उसको और विकसित और सर्व-सम्मत सिद्ध कर दिया है; किसी ने एक-एक पद के कई-कई तरह से अर्थ करके उसका अर्थ-चमत्कार दिखा दिया है; किसी ने अनेक अंतर्कथाएँ गढ़कर क्षेपक-रूप में सम्मिलित करके ग्रंथ का कलेवर बढ़ा दिया है; किसी ने तिलक को मनोरंजक बनाने के लिये उसके साथ अनेक श्लोक, कवित्त, दृष्टांत, ठुमरी-लावनी आदि गायन सम्मिलित करके उसे रँगीली कथा बना दिया है; किसी ने

मानस के समस्त शब्दों की ही छानबीन करके यह बता दिया है कि इस ग्रंथ में इतनी संज्ञाएँ, इतने सर्वनाम, इतनी क्रियाएँ, इतने विशेषण और अव्यय आदि हैं; किसी ने काव्य-दृष्टि से इस ग्रंथ में प्रवेश करके इसके रूपकालंकार, शब्द-चमत्कार, नायक-नायिका, रस-विभावना आदि से ही मुग्ध होकर प्रशंसा के पुल बाँध दिए हैं; किसी ने आधुनिक साहित्यिक शैली से इसकी परीक्षा करके इसके रचना-कौशल, भाषा-विन्यास, शब्दच्छटा, भाव-माधुर्य, चरित्र-चित्रण और स्वाभाविक वर्णन पर लट्टू होकर इसे समस्त लक्षणों से युक्त 'महा-काव्य' कह दिया है। इत्यादि। किंतु इतना सब महाप्रयत्न होने पर भी, आज तक, श्रीराम-चरित-मानस के समस्त चमत्कारों का प्रकाश हो सका है या नहीं, इस पर 'हाँ' कहनेवालों की संख्या शायद 'नहीं' के बराबर है।

इस मानस-रामायण का २४ करोड़ हिंदुओं में इतना महत्त्व है कि झोपड़ियों में रहनेवाले अपढ़ गँवार से लेकर महलों में रहनेवाले राजा और विद्वान् पंडित तक इसका समान-रूप से सम्मान करते, और इसके वचनों को अपने नित्यप्रति के व्यवहार में, वेद-वाक्यों के समान, उद्धृत करते हैं, जो कि इस ग्रंथ की सर्व-प्रियता का ज्वलंत प्रमाण है। यह एक ऐसा ज्ञान का दर्पण है कि इसमें प्रत्येक मत के मनुष्य को अपना रूप दिखलाई पड़ जाता है। इतना ही नहीं, लाखों नेमी-प्रेमी-सत्संगी मनुष्य, धूप-आरती के साथ, एक परम पवित्र धर्म-ग्रंथ की भाँति, इसका नित्यप्रति पाठ करने और उसके द्वारा अपने अभीप्सित मनोरथों की सिद्धि की आशा करते हैं। जिस प्रकार ईसाई लोग बाइबिल को, मुसलमान कुरान को, पारसी जेंदावस्ता को, ब्राह्मण वेद को और सिक्ख लोग ग्रंथ-साहब को अपना पूज्य ग्रंथ मानते हैं, उसी प्रकार रामानंदी वैष्णवगण श्रीरामचरितमानस को अपना परम पूज्य ग्रंथ समझते हैं। समझते ही नहीं, उन्होंने इस पवित्र ग्रंथ

पर अपना लोक-परलोक सब उत्सर्ग कर रक्खा है और अहर्निश इसी के श्रवण, मनन, निदिध्यासन और सत्संग में अपने समय का सदुपयोग करते हैं।

आजकल वैष्णव-साधु-समाज में, श्रीअयोध्यांतर्गत श्रीजानकीघाट-निवासी निखिल-शास्त्र-निष्णात महात्मा श्री १०८ पं० रामवल्लभाशरणजी महाराज मानस-रामायण के अद्वितीय वक्ता हैं। साधु-समाज में आपकी परम प्रतिष्ठा है। आपके अन्यतम सत्संगी श्रीसियारामलषणदासजी आपके प्रिय शिष्य हैं। श्रीरामायणीजी ने अपने जीवन-भर के निरंतर सत्संग-द्वारा श्रीराम-चरित-मानस का जो तत्त्व-निरूपण किया है, उसे आपने लेखनी-बद्ध भी कर लिया था। बहुत दिनों से हमारी इच्छा थी कि यदि वह हस्त-लिपि हमारे हाथ लगे, तो हम उसे पुस्तकाकार प्रकाशित कर मानस-प्रेमियों की भेंट करें। "जेहि के जेहि पर सत्य सनेहू, सो तेहि मिलइ न कछु संदेहू" के अनुसार, परम आनंद की बात है कि रामायणी श्रीसियारामलषणदासजी के एकांत सत्संगी, दानापुर-पटना-निवासी, साधु श्रीरामदुलारीशरणजी उस हस्त-लिपि को लेकर स्वयं हमारे पास पधारे और हमसे उसके छापने का अनुरोध किया। हमने भी उस अनुरोध को सादर स्वीकार करके, अपने यंत्रालय के मुख्य संशोधक श्रीचंद्रिकाप्रसाद गुप्त द्वारा, उसे अति परिश्रम से प्रचलित हिंदी में लिखवाकर, प्रस्तुत स्वरूप में, मानस-प्रेमियों के कर-कमलों में अर्पण किया है। आशा है, वे इस अलभ्य ग्रंथ से लाभ उठावेंगे।

इस 'मानसरामायण-प्रश्नोत्तरार्थ-प्रकाश'-ग्रंथ को यदि श्रीराम-चरित-[मा]नस का सार-तत्त्व या प्राण कहा जाय, तो कुछ अत्युक्ति न होगी। वास्तव [में] यह ग्रंथ है भी ऐसा ही। यह ग्रंथ पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध, दो भागों में [वि]भक्त है। पूर्वार्द्ध में मानस की विषय-रचना पर विचार हुआ है। इसमें [दि]खाया गया है कि श्रीरामचरितमानस में चार संवाद चल रहे हैं, जिनके [अं]तर्गत सब ४१ मूल-प्रश्न किए गए हैं। इन्हीं ४१ मूल-प्रश्नों के उत्तरों

मानस-सरोवर

सुनु खगपति रघुपति-प्रभुताई ; कहउँ जथामति कथा सोहाई
कहै भुसुंडि सुनहु खगनायक ; रामचरित सेवक-सुख-दायक
गयउ गरुड़ बैकुंठ तब हृदय राखि रघुबीर

सुनु सुभ कथा भवानि, राम-चरित-मानस बिमल ;
कहा भुसुंडि बखानि, सुना बिहँग-नायक गरुड़ ।
सो संबाद उदार, जेहि बिधि भा आगे कहब ;
सुनहु राम-अवतार-, चरित परम सुंदर अनघ ।
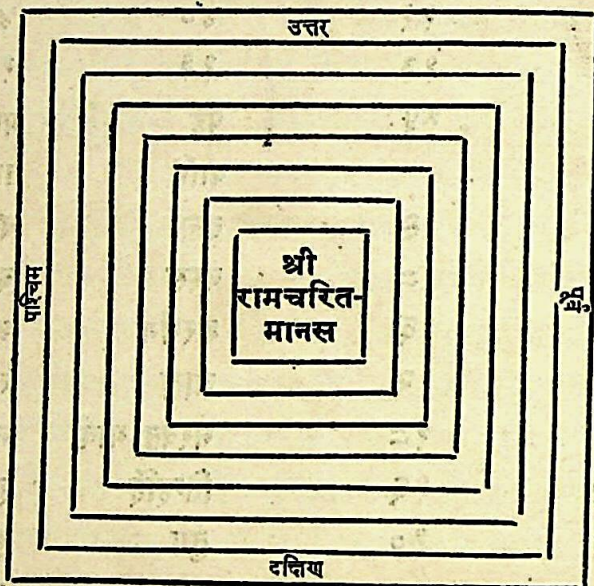
कहिहौं सोइ संबाद बखानी ; सुनहु सकल सज्जन सुख मानी
अब रघुपति-पद-पंकरुह हियँ धरि पाइ प्रसाद ;
कहउँ जुगल मुनिबर्य कर मिलन सुभग संबाद ।

कहउँ स्वमति अनुहारि अब उमा-संभु-संबाद ;
भयउ समय जेहि, हेतु जेहि, सुनि मुनि मिटहि बिषाद ।
एक बार त्रेता-जुग माहीं ; संभु गए कुंभज ऋषि पाहीं ।

दो०—सुठि सुंदर संबाद बर बिरचेउ बुद्धि बिचार ;
ते यहि पावन सुभग सर घाट मनोहर चार ।

जम-दिसि कर्म जागवल्कि-भरद्वाज सन, संकर-भवानी प्रति ज्ञान दिसि-...
उत्तर उपासना भुसुंडि-खगनायक सों बरनी विचित्र सब जीवन उधारिनी
तुलसी गोसाईं कही संतन-समाज दिसि पूरब सुभक्ति कलिमल-अघ-हारि...
सप्त हैं सोपान एहि मानस के चारि घाट जानि सतसंग भलि भाँतिन बिचारि...

श्रीसीतारामाभ्यां नमः

श्रीमते रामानंदाय नमः

श्रीमद्गोस्वामि तुलसीदास-कृत

श्रीमानसरामायण-प्रश्नोत्तरार्थ-प्रकाश

मंगलाचरण

श्लोक

रामानंदमहं वंदे वेदवेदांतपारगम् ।
राममंत्रप्रदातारं सर्वलोकोपकारकम् ॥ १ ॥

श्रीरामचंद्रं रघुवंशदीपं रघूत्तमं राजमणिं रसाढ्यम् ।
राजीवनेत्रं रणरंगधीरं रमापतिं नित्यमहं भजामि ॥ २ ॥

कालांतकं कंजमुखं प्रसन्नं सुपादपद्मं शुभदं जनानाम् ।
काश्मीरिकाभूषितभालदेशं भूमंडनं राममहं भजामि ॥ ३ ॥

केतवासो निगमैः प्रगीतं सुरैश्च स्वर्लोकविहारदिव्यम् ।
केप्यसौ दाशरथिर्बभूव सदा गुणं तस्य वयं स्मरामः ॥ ४ ॥

चकार लीलां सुखदां जनानामत्यद्भुतां कीशगणैश्च ऋक्षैः ।
पाषाणसेतौ रचने जलाब्धौ येनाऽसुराः कालगतिं प्रजग्मुः ५

दो०—सुमिरि राम सिय संत गुरु, गनप गिरा शिव व्यास।
रामायण-प्रश्नोत्तरी , करहुँ सु-अर्थ प्रकास॥
भक्त भक्ति भगवंत गुरु, चतुर नाम बपु एक।
इनके पद बंदन किए, नासत बिघ्न अनेक॥
तुलसिदास-पद-कमल महँ, हाथ जोरि सिर नाय।
राम-चरित-मानस बसहिं, कृपा करहु सति भाय॥
राम बाम दिसि जानकी, लषण दाहिनी ओर।
ध्यान सकल कल्यानकर, तुलसी सुरतरु तोर॥

छंद

नमो श्रीगणेशं महेशं भवानी, नमो विष्णु-पादांबुजं ब्रह्म बा...और
नमो राम घनस्याम कमनीय रूपं, नमो जानकी जक्तमाता अ...और
नमो बिस्वभरनं लषण सत्रुआरी, नमो केसरीनंदनं सुक्खका...रु
नमो मीन बाराह नरसिंह कूर्मं, नमो बावनं पर्सुरामाति ...समे
नमो कृष्ण बलराम राधाकिसोरी, नमो कालिका देव त्रयतीस क्रो...ट

ग्रंथ का आरंभ

मंगलाचरण के पश्चात् अब ग्रंथ का आरंभ करते हैं ... तुलसीदासजी महाराज की रामायण का नाम 'राम-चरित-मान... है। मानस सरोवर या तालाब को भी कहते हैं और मन-सं...

[ध्या]न से उत्पन्न मन की भूमि को भी कहते हैं। साधारण जल तो [ध]रती पर खोदकर बनाए हुए सरोवर में भरा जा सकता है, परंतु [रा]मचरित-रूपी जल तो अंतःकरण में मन की भूमि पर बने हुए [म]ानस-सरोवर में ही भरा जा सकता है। श्रीमद्गोस्वामी तुलसी-[द]ासजी कहते हैं कि इस राम-चरित-मानस को प्रथम श्रीमहादेवजी [ने] रचकर अपने मन में रक्खा था और अवसर पाकर उसे श्रीपार्वतीजी [क]ो सुनाया था और उसका नाम राम-चरित-मानस रक्खा। सो श्रीशिवजी की कृपा से मेरे मन में ऐसा प्रकाश हुआ कि मैं उस [रा]म-चरित-मानस का कवि बन गया।

गोसाईंजी-कृत राम-चरित-मानस में चार संवाद-रूपी चार घाट और सात सोपान-रूपी सात सीढ़िया हैं। इनमें सब से प्राचीन और सब से ऊँचा घाट, जो उत्तर की ओर है, वह श्रीकाकभुशुंडि-[ग]रुड़-संवाद है। यह उत्तर-घाट उपासना-कांड कहलाता है। [इ]समें अवगाहन करना अति कठिन है। क्योंकि सरोवर का उत्तर-[घ]ाट प्रायः चारदीवारी से घिरा हुआ सती स्त्रियों के स्नान के लिये [ह]ोता है। उसमें वे ही मज्जन-पान कर सकते हैं जिनमें सती स्त्रियों [की] नाईं अविरल, अव्यभिचारिणी और अनन्य भक्ति होती है। [काक]भुशुंडिजी ने अपने वर्णन में किसी देवी-देवता की स्तुति-[प्रबं]ध न करके अनन्य-भाव से केवल राम-चरित का ही वर्णन

किया है और जहाँ कहीं उनके वचन आए हैं उनमें केवल-मात्र भक्ति की ही प्रधानता दिखाई है। यथा—

प्रथमहि अतिअनुराग भवानी; राम-चरित-सर कहेसि बखानी (उ०

*   *   *

राम-भगति-मनि उर बस जाके; दुख-लव-लेस न सपनेहुँ ताके
चतुर-सिरोमनि तेइ जग माहीं; जे मनि लागि सुजतन कराहीं (उ०

दूसरा पश्चिम-घाट श्रीमहादेव-पार्वती-संवाद है। यह ज्ञानमय होने के कारण ज्ञान-कांड कहलाता है। श्रीमहादेवजी जहाँ कहीं बोलते हैं, सर्वत्र ज्ञानमय और अनुभव-पूर्ण वचन बोलते हैं। ज्ञान और विवेक द्वारा सार-तत्त्व को मिथ्या से अलग निकालकर उसे ग्रहण करते हैं। यथा—

झूठउ सत्य जाहि बिनु जाने; जिमि भुजंग बिनु रजु पहिचाने
जेहि जाने जग जाइ हेराई; जागे जथा सपन-भ्रम जाई (बा०

*   *   *

उमा कहहुँ मैं अनुभव अपना; सत हरिभजन जगत सब सपना (अ०

तीसरा दक्षिण-घाट श्रीयाज्ञवल्क्य-भरद्वाज-संवाद है। यह कर्मात्मक और कर्म-प्रधान होने के कारण कर्म-कांड कहलाता है। श्रीयाज्ञवल्क्यजी के समस्त वचन सर्वत्र कर्म का प्रतिपादन करते हैं, इनके सब प्रसंगों का उपक्रम और उपसंहार कर्म पर ही होता है। यथा—

यह इतिहास पुनीत अति उमहि कहा बृषकेतु ;
भरद्वाज सुनु अपर पुनि राम-जनम कर हेतु । (बा०)

* * *

सो मैं तुम सन कहहुँ सब सुनु मुनीस मन लाइ ;
राम-कथा कलिमल-हरनि मंगल-करनि सुहाइ । (बा०)

चौथा पूर्व-घाट श्रीगोस्वामीजी का संत-समाज से संवाद है। यह दीनता-पूर्ण घाट है । जो लोग उपासना, ज्ञान और कर्म से हीन हैं, वह भी इस दीनता और नम्रता के घाट में स्नान करके भव-बंधन से छुटकारा पा जाते हैं । लौकिक सरोवरों में पूर्व की ओर जैसे गोघाट बना होता है, जिसके द्वारा लूले-लँगड़े मनुष्य और पशु आदि सभी प्राणी सहज ही में जल तक पहुँच जाते हैं, वैसेही गोसाईंजी के घाट में भी सभी कोई सुगमता-पूर्वक आ जाते हैं । यथा—

कबि न होउँ नहिं चतुर प्रबीनू ; सकल कला सब बिद्या-हीनू
कबित-बिबेक एक नहिं मोरे; सत्य कहौं लिखि कागद कोरे(बा०)

* * *

जे जनमे कलिकाल कराला; करतब बायस बेष मराला
चलत कुपंथ बेद-मग छाँडे; कपट-कलेवर कलिमल-भाँडे
बंचक भगत कहाइ राम के; किंकर कंचन-कोह-काम के

तिन महँ प्रथम रेख जग मोरी; धिग धर्मध्वज धंधक धोरी
जौं अपने अवगुन सब कहऊँ; बाढ़इ कथा पार नहिं लहऊँ
तातें मैं अति अलप बखाने; थोरे महँ जानिहहिं सयाने

इस प्रकार चार-संवाद-रूपी चार घाटोंवाला और सप्त-कांड-रूप सात सोपानोंवाला यह राम-चरित-मानस है। इसमें कागभुशुंडि-गरुड़-संवाद सब से प्राचीन और आदिम है; श्रीमहादेव-पार्वती-संवाद उसके बाद का है, क्योंकि श्रीमहादेवजी अपने संवाद में कागभुशुंडि-गरुड़-संवाद की चर्चा करते हैं; श्रीयाज्ञवल्क्य-भरद्वाज-संवाद उसके बाद का है, क्योंकि श्रीयाज्ञवल्क्यजी अपने संवाद में पूर्व के दो संवादों (कागभुशुंडि-गरुड़-संवाद और श्रीमहादेव-पार्वती-संवाद) की चर्चा करते हैं; तथा सब से अंत का जो श्रीगोस्वामी तुलसीदासजी का साधु-समाज से संवाद है, उसमें वे अपने पूर्व के तीनों संवादों की चर्चा करते हैं।

प्रथम के श्रीकागभुशुंडि-गरुड़-संवाद में गरुड़जी प्रश्न करते हैं और श्रीकागभुशुंडिजी उत्तर देते हैं; श्रीमहादेव-पार्वती-संवाद में श्रीपार्वतीजी प्रश्न करती हैं और श्रीमहादेवजी उत्तर देते हैं, श्रीयाज्ञवल्क्य-भरद्वाज-संवाद में श्रीभरद्वाजजी प्रश्न करते हैं और श्रीयाज्ञवल्क्यजी उत्तर देते हैं; और इन तीनों संवादों में जो कुछ प्रश्नोत्तर हुए या हो रहे हैं, उन्हीं को श्रीगोस्वामी तुलसीदासजी

अपनी सरल, मधुर, विनय-पूर्ण और भक्ति-विवेक-विनय-नय-सानी बानी में साधुओं को सुना रहे हैं।

अब मैं अपनी मति-अनुरूप क्रमशः यह दिखलाने का यत्न करूँगा कि श्रीगोस्वामीजी के राम-चरित-मानस में कितने प्रकार के प्रश्न कहाँ-कहाँ पर किए गए हैं और उनके कहाँ से कहाँ तक किस-किस प्रकार से क्या-क्या उत्तर दिए गए हैं। इस प्रश्नोत्तरी को भली भाँति समझ लेने से श्रीरामायण का रहस्य समझने में मानस-प्रेमियों को बड़ी सुगमता होगी। इन प्रश्नोत्तरों को हृदयंगम किए विना गोसाईंजी की रामायण का यथार्थ मर्म समझने में बड़ी कठिनता होती है।

राम-चरित-मानस के सातों कांड में सब ४१ प्रश्न हैं। जिनमें एक प्रश्न श्रीभरद्वाजजी का है, १४ प्रश्न श्रीपार्वतीजी के कैलास-प्रकरण में और ६ प्रश्न उत्तरकांड में हैं, १[illegible] प्रश्न श्रीगरुड़जी के उत्तरकांड में हैं, और ६ प्रश्न श्रीलषणलालजी के आरण्य-कांड में हैं।

अब इस प्रश्नोत्तरार्थ-प्रकाश में पहले श्रीभरद्वाजजी के प्रश्न का उत्तर दिया जायगा।

माघ के महीने में, जब सूर्य मकर-राशि में आते हैं, तब देवता, [illegible], किन्नर और मनुष्य सब तीर्थराज प्रयाग में आकर त्रिवेणी-

स्नान करते हैं, वेणीमाधव के चरण-कमलों की पूजा करते हैं और अक्षयवट को स्पर्श करके हर्षित होते हैं। प्रयागराज में श्रीभरद्वाज मुनि का एक परम पवित्र और अत्यंत रमणीय आश्रम है। जितने ऋषि-मुनि स्नान करने जाते हैं, सो सब उसी आश्रम में जो ऋषि-मुनियों का समाज होता है उसमें सम्मिलित होते हैं और परस्पर हरि-कीर्तन, ब्रह्म-निरूपण, धर्म-विधान, तत्त्व-चिंतन एवं ज्ञान-वैराग्य युक्त ईश्वर-भक्ति की चर्चा करते हैं। इस प्रकार प्रतिवर्ष माघ महीने भर वहाँ यह आनंद-समारोह होता है।

पुरा काल में, एक बार, जब माघ-स्नान करके सब ऋषि-मुनि अपने-अपने आश्रमों को चलने लगे, तो श्रीभरद्वाजजी ने, अपने आश्रम में पधारे हुए, परम ज्ञानी श्रीयाज्ञवल्क्य-मुनि के चरण पकड़कर उन्हें अपने आश्रम में रोक लिया और आदर-सहित उनके चरण-कमल धोकर उन्हें एक पवित्र आसन पर बैठाया। फिर भली भाँति उनकी पूजा और यश-गान करके परम पवित्र और सुकोमल वाणी में उनसे बोले—

नाथ एक संसउ बड़ मोरे; कर-गत वेद-तत्त्व सब तोरे।
कहत सो मोहिं लाग भय लाजा; जो न कहउँ बड़ होइ अकाजा।
संत कहहिं अस नीति प्रभु; स्रुति पुरान मुनि गाव;
होइ न बिमल बिबेक उर; गुरु सन किए दुराव।

अस बिचारि प्रगटौं निज मोहू; हरहु नाथ करि जन पर छोहू
राम नाम कर अमित प्रभावा; संत-पुरान-उपनिषद गांवा
संतत जपत संभु अबिनासी; सिव भगवान ज्ञान-गुन-रासी
आकर चारि जीव जग अहहीं; कासी मरत परम पद लहहीं
सोपि राम-महिमा मुनिराया; सिव उपदेश करत करि दाया

(प्रश्न १)

"राम कवन?" प्रभु पूछहुँ तोहीं, कहिय बुझाइ कृपानिधि मोहीं
एक राम अवधेस-कुमारा, तिनकर चरित बिदित संसारा
नारि-बिरह दुख लहेउ अपारा, भयउ रोष रन रावन मारा
प्रभु, सोइ राम कि अपर कोउ, जाहि जपत त्रिपुरारि ?
सत्य-धाम सर्वज्ञ तुम्ह, कहहु बिबेक बिचारि ।
जैसे मिटइ मोह भ्रम भारी; कहहु सो कथा नाथ, बिसतारी

श्रीभरद्वाज मुनि के इस प्रश्न का श्रीयाज्ञवल्क्य-मुनि ने जो उत्तर दिया है, वह बालकांड में

ऐसेइ संसय कीन्ह भवानी; महादेव तब कहा बखानी
कहौं सो मति अनुहारि अब, उमा-संभु-संवाद

से आरंभ करके उत्तरकांड में

वह सुभ संभु-उमा-संबादा ; सुख-संपादन समन-बिषादा

तक, सात कांडों में, है । यद्यपि श्रीयाज्ञवल्क्य-मुनि का यह

निश्चित सिद्धांत है कि अवधेशकुमार श्रीदशरथात्मज राम ही व
राम हैं, जिनका वेद, पुराण, उपनिषद् में अमित प्रभाव गा
गया है एवं जिनका संतजन भूरि-भूरि वर्णन करते हैं, ज्ञान-गुण
राशि अविनाशी शंकर भगवान् जिनका निरंतर जप करते हैं औ
उनकी पुरी काशी में जो जीव मरते हैं, उनको तारक-मंत्र द्वारा व
उसी नाम का उपदेश करते हैं जिससे जीव परम पद प्राप्त करते
तथापि इस हेतु कि श्रीभरद्वाजजी ने उनसे प्रार्थना की थी
कहहु सो कथा नाथ बिसतारी, इस कारण श्रीयाज्ञवल्क्यज
श्रीभरद्वाजजी को उत्तर देते हैं कि मेरा तो यह ध्रुव निश्चय है
आत्मानं मानुषं मन्ये रामं दशरथात्मजम् (बाल्मीकि) अर्था
दशरथ-सुत मनुष्य-रूप में जो राम हैं, वेही जगदात्मा हैं, तो भी

(उत्तर १)

तदपि यथाश्रुत कहौं बखानी; सुमिरि गिरापति प्रभु धनुपानी
प्रणवौं सोइ कृपालु रघुनाथा; बरनौं बिसद जासु गुन-गाथा

और, श्रीपार्वतीजी के इस प्रश्न का कि राम सो अवधनृपति
सुत सोई ? जो उत्तर श्रीशंकरजी ने दिया, वही उत्तर याज्ञवल्क्य
जी का जानो।

श्रीपार्वतीजी जब सती-तन में थीं, तो उन्होंने यह संशय किया था कि

ब्रह्म जो व्यापक बिरज अज अकल अनीह अभेद; सं

सो कि देह धरि होइ नर जाहि न जानत वेद?

श्रीशंकरजी ने सतीजी को उत्तर दिया था—

जासु कथा कुंभज ऋषि गाई; भक्ति जासु मैं मुनिहि सुनाई
सोइ मम इष्टदेव रघुवीरा; सेवत जाहि सदा मुनि धीरा
छंद—मुनि धीर जोगी सिद्ध संतत विमल मन जेहि ध्यावहीं,
कहि नेति निगम पुरान आगम जासु कीरति गावहीं;
सोइ राम व्यापक ब्रह्म भुवन-निकाय-पति माया-धनी,
अवतरेउ अपने भगत हित निज तंत्र नित रघुकुलमनी
लाग न उर उपदेश जदपि कहेउ सिव बार बहु।

यद्यपि श्रीशिवजी ने अनेक बार उपदेश किया, तो भी सतीजी का संशय दूर नहीं हुआ और शिवजी का उपदेश उनके उर में नहीं लगा। सो बहुत काल पश्चात् जब वही सती पार्वती-रूप में, कैलास-पर्वत पर, श्रीशिवजी के चरण-शरण में विद्यमान हुईं, तो उन्होंने अपने पूर्व तन के संशयरूपी संस्कार के कारण श्रीमहादेवजी से फिर १४ प्रश्न किए जिनमें ९ प्रश्न मुख्य हैं और उन्हीं के उत्तर सातों कांड रामायण का व्याख्यान हुआ है। यथा—

कीन्ह प्रश्न जेहि भाँति भवानी; जेहि विधि शंकर कहा बखानी
... सब हेतु कहब मैं गाई; कथा-प्रबंध बिचित्र बनाई
... जे मुनि परमारथ-वादी; कहहिं राम कहँ ब्रह्म अनादी

सेस सारदा वेद पुराना; सकल करहिं रघुपति-गुन गा
तुम पुनि राम नाम दिन राती; सादर जपहु अनंग अरा

(प्रश्न १)

राम सो अवध-नृपति-सुत सोई; की अज अगुन अलखगति को
जो नृप-तनय तो ब्रह्म किमि नारि-विरह मति भोरि;
देखि चरित महिमा सुनत भ्रमत बुद्धि अति मोरि।
जो अनीह व्यापक विभु कोऊ; कहहु बुझाइ नाथ मोहिं सो

श्रीशिवजी महाराज अपने उपास्यदेव की वंदना करते
पार्वतीजी के प्रश्न का उत्तर देते हैं—

(उत्तर १)

राम ब्रह्म व्यापक जग जाना; परमानंद परेश पुरा
बंदौं बाल-रूप सोई रामू; सब बिधि सुलभ जपत जिसुना
पुरुष प्रसिद्ध प्रकास-निधि प्रगट परावर नाथ;
रघु-कुल-मनि मम स्वामि सोई (कहि सिव नायउ माथ)।
सब कर परम प्रकाशक जोई; राम अनादि अवधपति स
जगत प्रकास्य, प्रकाशक रामू; मायाधीस ज्ञान-गुन-धा
जासु कृपा अस भ्रम मिटि जाई; गिरिजा सोई कृपालु रघु
(करि प्रनाम रामहि त्रिपुरारी); द्वौ सो दसरथ-अजिर-बिह

और, श्रीभुशुंडिजी का भी यही सिद्धांत है—

बरनि न जाइ रुचिर अँगनाई; जहँ खेलहिं नित चारौ भाई
रूप-रासि नृप-अजिर-बिहारी; नाचहिं निज प्रतिबिंब निहारी

तथा गोसाईं तुलसीदासजी का भी यही सिद्धांत है—

मन क्रम बचन अगोचर जोई; दसरथ-अजिर बिचर प्रभु सोई

और श्रीशिवजी का भी यही सिद्धांत है—

जेहि इमि गावहि बेद बुध, जाहि धरहिं मुनि ध्यान;
सोइ दसरथ-सुत भगत-हित, कोशलपति भगवान ।

सोइ प्रभु मोर चराचर स्वामी; रघुबर सब उर अंतरजामी
बैठे सिव बिप्रन्ह सिर नाई; हृदय सुमिरि निज प्रभु रघुराई
जेहि महँ आदि मध्य अवसाना; प्रभु प्रतिपाद्य राम भगवाना

ग्रंथांतर में भी कहा है—

वेदे रामायणे चैव पुराणे भारते तथा;
आदौ मध्यावसाने च हरिः सर्वत्र गीयते ।

इसी मत की पुष्टि में और भी अनेक वचन आए हैं । यथा—

स्रुति पुरान सद्ग्रंथ कहाहीं; रघुपति-भगति बिना सुख नाहीं

यदि कोई प्रश्न करे कि और सब का मत क्या है, तो कहते हैं—

सब कर मत खगनायक एहा; करिय राम-पद-पंकज नेहा
... प्रिय सबहिं जहाँ लगि प्रानी;
... को जीव जंतु जग माहीं; जेहि सियराम प्रानप्रिय नाहीं

यदि शंका की जाय कि जिन लोगों को पंचदेवादि की उपासन
इष्ट है, उनका प्रेम राम-पद-पंकज में कैसे हो सकता है, तो कहते हैं

रघुपति-चरन-उपासक जेते; खग मृग सुर नर असुर समे
राम-उपासक जे जग माहीं; यहि सम प्रिय तिनके कछु नाहिं

* * *

यहाँ न पक्षपात कछु राखौं; वेद पुरान संत मत भाखौं
वेद पुरान संत मत एहू; सकल सुकृत-फल राम-सने
निगमागम पुरान मत एहा; कहहिं सिद्ध मुनि नहिं संदे

* * *

नानापुराणनिगमागमसंमतं यद्रामायणे

* * *

चारिउ बेद पुरान अष्टदस, छहो सास्त्र सदग्रंथन को र
मुनि-जन-धन संतन को सरबस, सार अंस सम्मत सबही को

* * *

श्रीवशिष्ठजी का भी यही सिद्धांत है—

आगम निगम पुरान अनेका; पढ़े सुने कर फल प्रभु ए
तव पद-पंकज प्रीति निरंतर; सब साधन कर फल यह सुं

शिव उवाच

जहँ लगि साधन बेद बखानी; सब कर फल हरिभक्ति भवा

कागभुशुंडि उवाच ।

स्रुति-सिद्धांत इहै उरगारी; राम भजिय सब काम बिसारी

राम उवाच

निज सिद्धांत सुनावौं तोहीं; सुनु मन धरु सब तज भज मोहीं

कागभुशुंडि उवाच

सिव अज सुक सनकादिक नारद; जे मुनिवर बिज्ञान-बिसारद

बाल्मीकि उवाच

सब कर माँगहिं एक फल, रामचरन रति होउ;
तिनके मन-मंदिर बसहु, सिय रघुनंदन दोउ ।

वशिष्ठ उवाच

तव पद-पंकज प्रीति निरंतर; सब साधन कर फल यह सुंदर

साधन सिद्ध राम-पद-नेहू; मोहिं लखि परत भरत-मत एहू

बरनौ रघुबर बिसद जस, स्रुति-सिद्धांत निचोरि ;
करब लोकमत बेदमत, नृप नय निगम निचोरि ।

पंचदेवादि भी राम ही के अंश हैं और राम ही का भजन करते हैं, अतएव उनके भजन-पूजन का फल राम-पद में प्रेम होता है। इसी हेतु अवधवासियों ने पंचदेव की नित्य पूजा की है। यथा—

राजा राम जानकी रानी ।

* * *

संभु बिरंचि बिस्नु भगवाना ; उपजहि जासु अंस ते नाना

रामहि भजहिं तात सिव धाता ; नर पामर कर केतिक बाता
करि मज्जन पूजहिं नर नारी ; गनपति गौरि पुरारि तमारी
रमारमन-पद बंदि बहोरी ; बिनवहिं अंजुलि अंचल जोरी
महिमा जासु जान गनराऊ ; प्रथम पूजियत नाम प्रभाऊ
बिधि-हरि-हर-बंदित पद-रेनू
सिव बिरंचि हरि जाके सेवक ।
सिव बिरंचि जेहि सेवहीं तासों कौन बिरोध ?

जिन लोगों ने अयोध्या में श्रीरामजी का पूजन किया, वे श्रीरामजी के प्राप्त होने से अचल हुए । अतएव सबका मत है श्रीराम-पद में प्रेम करे ।—

जप तप संयम नेम ब्रत, योग यज्ञ बैराग ;
सब कर फल रघुपति-भगति, रामचरन-अनुराग ।

सरिता-जल जलनिधि महँ जाई ; होइ अचल जिमि जिव हरि प
जिमि सरिता सागर महँ जाहीं ; यद्यपि ताहि कामना न
तिमि सुख संपति बिनहि बुलाए ; धरमशील पहँ जाहिं सुह

ग्रंथांतर में भी कहा है—

आकाशात्पतितं तोयं यथा गच्छति सागरम्,
सर्वदेवनमस्कारः केशवं प्रति गच्छति ।

जब जीव अपने कर्म, ज्ञान, उपासना, भक्ति, रहस्य

शरणागत होने से श्रीरामजी को प्राप्त होता है तबही अचल विश्राम पाता है। जबतक पंचदेवादि की सेवा-पूजा किया करता है, तबतक अनेकों जन्मों में भटकता रहता है, कभी शांति को प्राप्त नहीं होता। इस विषय में वाराहपुराण का वचन है—

भास्करस्य तु यो भक्तः शतजन्मान्तरे नरः।
तस्यैव तु प्रसादेन रुद्रे भक्तिः प्रजायते ॥
शंकरस्य तु यो भक्तः शतजन्मान्तरे नरः।
तस्यैव तु प्रसादेन विष्णुभक्तिः प्रजायते ॥

अर्थ—सूर्य का जो भक्त है, सो सौ जन्मों के पश्चात् श्रीसूर्य के प्रसाद से श्रीशिवजी की भक्ति को प्राप्त होता है, और श्रीशिवजी का जो भक्त है, वह सौ जन्मों के पश्चात् श्रीशिवजी के प्रसाद से विष्णु-भक्ति को प्राप्त होता है।

श्रीरामजी की समुद्र से उपमा है, मेघ की उपमा शुभ कर्म से है, जीव की उपमा जल से है, पंचदेवादि की उपमा सरिता से है। तात्पर्य यह कि मेघ के द्वारा जिस प्रकार जल की वृष्टि होती है, वैसेही शुभ कर्म करके जीव का प्रभव होता है; और जलरूप जीव यत्र-तत्र संसार में भटकता फिरता है, कहीं विश्राम नहीं पाता। किंतु पंचदेव की उपासना जब करता है, तो मानों जल सरिता में आ जाता है, सरिता में आ जाने से उसका सागर पहुँचना सुगम हो

जाता है। किंतु सरिता में जल को विश्राम नहीं मिलता; विश्राम औ
अचल शांति तबही मिलती है जब वह सागर में पहुँच जाता है
ऐसेही जीव को भी विश्राम तभी मिलता है जब वह श्रीरामरू
सागर में पहुँच जाता है। यथा—

राम सिंधु घन सज्जन धीरा
छवि-समुद्र हरि-रूप निहारी
भरि लोचन छबिसिंधु निहारी
राम-सरूप सिंधु समुहाहीं

ईश्वर-अंस जीव अबिनासी; चेतन अमल सहजसुखरासी (उ०

जलरूप जीव जब पंचदेवादि की उपासना-पूजा करता है,
मानों इतर नदियों को प्राप्त है। फिर उपासना-पूजा से उसमें भ
उत्पन्न होती है, सो वह भक्ति गंगा की धारा है। और जैसे सब नदि
जब गंगा में मिल जाती हैं, तो वह सीधे समुद्र में पहुँच जाती
वैसेही पंचदेवादि की उपासना से जब जीव में भक्ति उत्पन्न होती
तो वह मानों गंगा की धारा में आजाता है, जहाँ से वह सीधा रामरू
समुद्र में समाकर अचल पद को प्राप्त होता है। अतएव श्रीराम
सबके कारण और सब से परे हैं। यथा—

वंदेऽहं तमशेषकारणपरं रामाख्यमीशं हरिम्। (बा०)

और भी—

यस्यांशेनैव ब्रह्माविष्णुमहेश्वराद्या जाता महाविष्णुर्यस्य दिव्यगुणश्च एकः कार्यकारणयोः परः परमपुरुषो रामो दाशरथिर्बभूव । (अथर्ववेद)

अब श्रीराम-परमात्मा का ऐश्वर्य वर्णन करते हैं—

राम काम सतकोटि सुभगतनु ; दुर्गा अमितकोटि अरिमर्दनु (उ०)
सक्र कोटि सत सरिस बिलासा; नभ सतकोटि अमित अवकासा

मरुत कोटि सत बिपुल बल, रबि सतकोटि प्रकास;
ससि सतकोटि सुसीतल, समन सकल भव त्रास ।
कालकोटि सत सरिस अति, दुस्तर दुर्ग दुरंत;
धूमकेतु सम कोटि सत, दुराधर्ष भगवंत ।

प्रभु अगाध सतकोटि पताला; समन कोटि सत सरिस कराला
तीरथ अमित कोटि सत पावन; नाम अखिल अघ-पुंज-नसावन
हिमगिरि कोटि अचल रघुबीरा; सिंधु कोटि सत सम गंभीरा
कामधेनु सत कोटि समाना; सकल कामदायक भगवाना
सारद कोटि अमित चतुराई ; बिधि सत कोटि सृष्टि निपुनाई
बिस्नु कोटि सत पालन-करता; रुद्र कोटि सत सम संहरता
धनद कोटि सत सम धनवाना ; माया कोटि प्रपंच-निधाना
भार सत कोटि अहीसा; निरवधि निरुपम प्रभु जगदीसा

निरुपम न उपमा आन राम समान राम निगम कहै;
जिमि कोटिसत खद्योत सम रबि कहत अति लघुता लहै।
यहि भाँति निज निज मति बिलास मुनीस हरिहिं बखानहीं;
प्रभु भावगाहकु अति कृपालु सप्रेम सुनि सुषमा नहीं।

राम अमित-गुन-सागर, थाह कि पावै कोइ;
संतन सन जस कुछ सुनेउँ, तुमहिं सुनायउँ सोइ।

सो० भाव-बस्य भगवान, सुख-निधान करुना-भवन;
तजि ममता मद मान, भजिय सदा सीता-रमन। (उ०)

परं ब्रह्म परं सत्यं परं ज्ञानं परं तप;
परं बीजं परं क्षेत्रं परं कारणकारणम्।
एवं भूतो महातेजा रामः कमललोचनः;
सर्वलोकेश्वरः श्रीमान् श्रीराजा रघुनंदनः। (बाल्मीकि सु०

श्रीभुशुंडिजी कहते हैं—

अस सुभाव कहुँ सुनउँ न देखौं; केहि खगेस रघुपति-सम लेखौं।

अत्रि ऋषि का वचन है—

जेहि समान अतिशय नहिं कोई; ताकर सील कस न अस होई।
अब जानी मैं श्रीचतुराई; भजिय तुमहिं सब देव बिहाई।

—इत्यादि

यहाँ तक श्रीपार्वतीजी के पहले प्रश्न (राम सो अवध-नृपति

सुत सोई; की अज अगुन अलखगति कोई ?) का जो उत्तर श्रीराम-चरित-मानस में दिया गया, उसका संक्षिप्त दिग्दर्शन कराया गया। अब श्रीपार्वतीजी दूसरा प्रश्न करती हैं—

(प्रश्न २)

श्रीपार्वतीजी जिज्ञासा करती हैं—

प्रथम सो कारण कहहु बिचारी; निर्गुन ब्रह्म सगुन बपुधारी (बा०)

सती-तन में श्रीपार्वतीजी को जो संशय हुआ था, वह अब भी (अजहूँ कछु संशय मन मोरे) बना हुआ है कि क्या अजन्मा, सर्वव्यापक, निर्गुण ब्रह्म देहधारी नर हो सकता है ? श्रीपार्वतीजी की धारणा थी कि नहीं हो सकता। क्योंकि उन्हें मालूम था कि देवताओं के कार्य के लिये विष्णुभगवान्, जो सर्वज्ञ हैं, नर-तन धारण करते हैं और देवताओं के कार्य की सिद्धि करते हैं, और उसी प्रकार सर्वज्ञ कोटि में होने से श्रीत्रिपुरारि शंकरजी भी नर-तन धारण करके देवताओं के कार्य और जगत् के जीवों का उद्धार करते हैं; परंतु निर्गुण ब्रह्म सगुण शरीरधारी नहीं होता। और, यदि वह शरीरधारी हुआ, तो पार्वतीजी पूछती हैं कि वह देहधारी क्यों हुआ, इसका कारण विचार करके कहो। क्योंकि जगत कार्य है और इसके कारण ब्रह्मा, विष्णु, महेश; तिनका कारण वह जिसको श्रुतियों ने सहस्रशीर्षा पुरुषः करके वर्णन

किया है; तिसका भी जो कारण है, वह शेष कारण है। शेष कारण सो वह है, जो वर्णन करते-करते शेष रह जाय, और जिसका वर्णन हो सके। सो वह शेष कारण ही निर्गुण ब्रह्म कहलाता है। अग पार्वतीजी पूछती हैं कि वह 'निर्गुण ब्रह्म सगुण-वपु-धारी' कैसे हुए हे नाथ, पहले वह कारण विचार करके कहिए।

(उत्तर २)

श्रीपार्वतीजी के इस प्रश्न का उत्तर बालकांड के १२० वें दो से लेकर १८७ वें दोहे तक है, जिसमें राम-अवतार और नर-त धारण करने का हेतु तो सुनु गिरिजा हरिचरित सुहाये; विपु विशद निगमागम गाये से लेकर यह सब रुचिरचरित मैं भा तक के अन्तर्गत है जोकि तीसरे प्रश्न में दिखाया जायगा। निर्गुण ब्रह्म के सगुण होने का जो कारण है, वह यहाँ दिखलाते हैं

निर्गुन निराकार निर्मोहा; नित्य निरंजन सुख-संदोहा।
प्रकृतिपार प्रभु सब-उर-बासी; ब्रह्म निरीह बिरज अबिनासी (उ
अगुन अरूप अलख अज जोई; भगत-प्रेम-बस सगुन सो होई (बा

* * *

अगुन अलेप अमान एकरस; राम सगुन भए भक्त-प्रेम-बस (अ

* * *

एक अनीह अरूप अनामा; अज सच्चिदानंद परधामा
ब्यापक बिस्वरूप भगवाना; तेइ धरि देह चरित कृत नाना

सो केवल भक्तन-हित-लागी; परमकृपाल प्रनत-अनुरागी (बा०)

* * *

अगुन अखंड अनंत अनादी; जेहि चिंतहिं परमारथबादी
नेति नेति जेहि बेद निरूपा; निजानंद निरुपाधि अनूपा
संभु बिरंचि बिस्नु भगवाना; उपजहिं जासु अंस ते नाना
ऐसेउ प्रभु सेवक-बस अहहीं; भक्त-हेतु लीला-तनु गहहीं (बा०)

* * *

भक्ति अबसहु बसकरी (आरण्य०)

* * *

उत्तरकांड में श्रीरामजी ने अयोध्या-वासियों से स्वयं श्रीमुख से कहा है—

कहहु भगति-पथ कवन प्रयासा; जोग न मख जप तप उपवासा
सरल सुभाव न मन कुटिलाई; जथालाभ संतोष सदाई
ओर दास कहाइ नर आसा; करहिं तो कहहु कहा बिस्वासा
बहुत कहउँ का कथा बढ़ाई; एहि आचरन बस्य मैं भाई (उ०)

* * *

अब दिखाते हैं कि निर्गुण ब्रह्म सगुण किस प्रकार हुआ—

फूले कमल सोह सर कैसा; निर्गुन ब्रह्म सगुन भये जैसा (कि०)

* * *

जो गुन-रहित सगुन सो कैसे; जल-हिम-उपल बिलग नहिं जैसे।

ग्रंथांतर में कहा है—

प्रकृति गुण ते रहित है, ताते निर्गुण जान;
दिव्य गुण ते सहित है, ताते सगुण बखान।

निर्गुण अहै सगुण को भाई; निर्गुण में गुण रहे समाई।
निर्गुण जोइ सगुण है सोई; समुझत समुझत आवत है

शंका—निर्गुण ब्रह्म भक्त-प्रेम-वश जब सगुण हुआ, तो निर्गुण कारण और सगुण कार्य हुआ। फिर सगुण से क्या होता है?

उत्तर—ब्रह्म के दो स्वरूप अनादि काल से वर्तमान हैं। दोनों अभेद और कारण-कार्य से रहित हैं अर्थात् अशेष कारण।

यथा—

जेहि सगुन निर्गुन गाव (लं०)

जे ब्रह्म अजमद्वैतमनुभवगम्य मन पर ध्यावहीं
ते कहहु जानहु नाथ हम तव सगुन जस नित गावहीं। (उ

* * *

अस तव रूप बखानौं जानौं; पुनि पुनि सगुन ब्रह्मरति मानौं (आ

* * *

भगत-बछल प्रभु कृपानिधाना; बिस्वबास प्रगटे भगवाना

तात्पर्य यह कि विप्र, धेनु, सुर, संत और भक्तों के लि

पृथिवी का भार उतारने, निशाचरों का वध करने एवं श्रुति-धर्म की रक्षा करने के लिये निर्गुण ब्रह्म सगुण-रूप में प्रकट होता है।

यथा—

ब्यापक एक ब्रह्म अबिनासी ; सत चेतनघन आनँदरासी
अगुन सगुन दुइ ब्रह्म-सरूपा ; अकथ अगाध अनादि अनूपा
प्रभु ब्यापक सर्बत्र समाना ; प्रेम ते प्रगट होहिं मैं जाना
एक दारुगत देखिय एकू ; पावक सम जुग ब्रह्म बिबेकू
अग-जग-मै सब-रहित बिरागी ; प्रेम ते प्रभु प्रगटै जिमि आगी
सगुनहि अगुनहि नहिं कछु भेदा ; गावहिं मुनि पुरान बुध बेदा (बा.)
जै सगुन निर्गुनरूप रूप अनूप भूप सिरोमने (उ०)
इति बेद बदंति न दंतकथा, रबि आतप भिन्न न भिन्न जथा (लं०)
जो भुसुंडि-मन-मानस-हंसा; सगुन अगुन जेहि निगम प्रसंसा (बा.)

कहि अगुने सगुने कही, अगुन सगुन के बिंब;
उत्तर रबि जुत धरम के, जल तुषार को किंब । (मा०म०)

अगुन सगुन कहने में तो दो हैं, किंतु तत्त्व एक ही है। जैसे जल और जल की तरंग, जल और हिम या उपल, अथवा सूर्य भगवान् और उनका प्रकाश, इत्यादि ।

कहे ज्ञान अज्ञान बिनु, तम बिनु कहे प्रकास;
निर्गुन कहे जो सगुन बिनु, सोइ गुरु तुलसीदास । (दो०)

सगुण और निर्गुण वृक्ष और बीज की तरह जानना चाहिए
जैसे बीज में वृक्ष और वृक्ष में बीज सूक्ष्म रूप से बना रहता है
वृक्ष से बीज की और बीज से वृक्ष की उत्पत्ति होती है, वैसे
सगुण में निर्गुण और निर्गुण में सगुण को जानना चाहिए
सगुण और निर्गुण दोनों अनिर्वचनीय हैं। पुनः, जैसे कमल
बीज सरोवर के भीतर सूक्ष्म रूप से विद्यमान रहता है और ज
मिट्टी के संयोग से उसी बीज से अंकुर उत्पन्न होकर बढ़ता त
कमल-पुष्प के रूप में प्रस्फुटित होकर शोभायमान होता है, वैसे
निर्गुण ब्रह्म भक्ति और प्रेम के संयोग से सगुण-रूप में प्र
होकर अपने सूक्ष्म रूप से बड़े रूप में प्रकट होजाता है। पुनः जै
सोने से जब अनेक आभूषण बन जाते हैं, तो वह विशेष शो
को प्राप्त होता है, किंतु वह नाना आभूषण वास्तव में सोना ही
वैसे ही निर्गुण ब्रह्म सगुण-रूप होकर शोभायमान होता है, वास्त
में निर्गुण ही सगुण है। पुनः, जैसे सूत्र से वस्त्र, रेशम से पाटाम्ब
रुई से सूती वस्त्र एवं मृत्तिका से घट की उत्पत्ति होती है, वैसे
निर्गुण से सगुण की उत्पत्ति जानिए। पुनः, जैसे काष्ठ में अ
विद्यमान है किंतु चर्म-चक्षुओं से दिखाई नहीं देती, वैसे ही सगु
में निर्गुण, काष्ठ में अग्नि की भाँति, विद्यमान है। तत्त्व एक
है। यथा—

यद्यपि प्रभु सब-रहित बिरागी; प्रेम ते प्रगट होइ जिमि आगी
अतिशय कर्षण करै जो कोई; अनल प्रगट चंदन ते होई

जैसे काष्ठ में अग्नि जब तक कारण-रूप से विद्यमान रहती है, उससे कोई कार्य नहीं सधता; किंतु वही अग्नि जब कार्य-रूप में प्रकट होकर प्रत्यक्ष सगुण-रूप धारण करती है, तो उससे संसार के अनेक कार्य साधित होते हैं, वैसे ही निर्गुण ब्रह्म जब तक कारण-रूप में रहता है, उससे कोई कार्य नहीं सधता; किंतु जब वही ब्रह्म कार्य होकर सगुण-रूप में प्रकट होता है, तो उससे असंख्य जीवों का अप्रमेय कार्य साधित होता है। इत्यादि—

यहाँ तक श्रीपार्वतीजी के दूसरे प्रश्न **"प्रथम सो कारण कहहु बिचारी; निर्गुन ब्रह्म सगुन बपुधारी"** का उत्तर दिया गया। अब श्रीपार्वतीजी तीसरा प्रश्न करती हैं

(प्रश्न ३)

पुनि प्रभु! कहहु राम-अवतारा।
नाथ! धरेहु नर-तन केहि हेतू?

(उत्तर ३)

श्रीपार्वतीजी के इस प्रश्न का उत्तर श्रीशिवजी महाराज ने [illegible]कांड में **सुनहु राम अवतार, चरित परम सुंदर अनघ** से लेकर **[illegible] धेनु सुर संतहित लीन्ह मनुज अवतार।** निज इच्छा

निर्मित तनु माया गुन गोपार। (१९२ दोहा) तक दिया है और उसकी परिपुष्टि में और भी अनेक वचन आए हैं। यथा—

निज इच्छा अवतरेउ प्रभु, सुर द्विज गो महि लागि;
सगुन उपासक रहहिं सब, मोक्ष सकल सुख त्यागि। (कि०
अज अद्वैत अनाम, अलख-रूप अघ-रहित जो;
मायापति स्वइ राम, दास-हेतु नर-तन धरेउ। (वै०सं०)
बिप्र साधु सुर धेनु धरनि हित हरि अवतार लियो।
तुलसी रामजनम ते जनियत सकल सुकृत को साज। (गी०
अवतार नर संसार-भार बिभंजि दारुन दुख दहे। (उ०
नर-तन-धरेउ संतसुर काजा; कहहु करहु जस प्राकृत राजा। (अ०

श्रीराम-अवतार के एक से एक बढ़कर परम विचित्र अनेक कारण हैं, किंतु श्रीरामचरितमानस में चार कल्पों की कथा कही गई है। पहले कल्प में विष्णुलोक की कथा वर्णित है। यथा—

द्वारपाल हरि के प्रिय दोऊ; जय अरु विजय जान सब कोऊ।
बिप्र-स्राप तें दूनउँ भाई; तामस असुर देह तिन्ह पाई।
कनककसिपु अरु हाटकलोचन; जगतविदित सुर-पति-मद-मोचन।
बिजई समर बीर बिख्याता; धरि बराह-बपु एक निपाता।
होइ नरहरि दूसर पुनि मारा; जन प्रहलाद सुजस बिस्तारा।
भये निसाचर जाइ तेइ महाबीर बलवान;

कुंभकरन रावन सुभट सुर-बिजई जग जान ।

[कु]कृत न भये हते भगवाना ; तीनि जनम द्विज वचन प्रमाना
[ए]क बार तिनके हित लागी ; धरेउ सरीर भगत-अनुरागी
[क]स्यप अदिति तहाँ पितु माता ; दसरथ कौसल्या बिख्याता
[ए]क कलप एहि बिधि अवतारा ; चरित पवित्र किये संसारा (बा०)

दूसरे कल्प में रमा-वैकुंठ-लोक से विष्णु भगवान् का अवतार [हु]आ, सो इस प्रकार वर्णन किया है—

[ए]क कलप सुर देखि दुखारे ; समर जलंधर सन सब हारे
[श]भु कीन्ह संग्राम अपारा ; दनुज महाबल मरइ न मारा
[प]रमसती असुराधिप-नारी ; तेहि बल ताहि न जितहिं पुरारी

छल करि टारेउ तासु ब्रत प्रभु सुर-कारज कीन्ह ;
जब तेहि जानेउ मरम तब साप कोप करि दीन्ह ।

[ता]सु साप हरि कीन्ह प्रमाना ; कौतुकनिधि कृपाल भगवाना
[त]हाँ जलंधर रावन भयऊ ; रन हति राम परम पद दयऊ
[ए]क जनम कर कारन एहा ; जेहिलगि रामधरी नर-देहा (बा०)

तीसरे कल्प में श्रीनारदजी के शाप-वश क्षीरशायी-लोक से [अव]तार हुआ है । सो इस प्रकार है—

श्र[व]ण मानस-मूल उत्तरकांड का संबंध यहाँ से है "पुनि [पु]नि [प]ेसि मोह अपारा" सो कहते हैं—

नारद साप दीन्ह इक बारा; कल्प एक तेहि लगि अवत...

से आरंभ करके **एक कल्प एहि हेत प्रभु, लीन्ह मनुज अवता...**

सुर-रंजन सज्जन-सुखद, हरि भंजन भू-भा...

तक है।

नारदमुनि के शाप से क्षीरशायी चतुर्भुज विष्णुभगवान् द्वि... राम-रूप में, नर-तन में, अवतरित हुए। इस अवतार में कश्... और अदिति दशरथ-कौशल्या-रूप में थे और दोनों शिवगण, उनके वानर-मुख को देखकर हँसे थे, कुम्भकर्ण और रावण हुए... श्रीविष्णुभगवान् नर-तन-धारी राम हुए और नारद के शापानु... नारी के विरह में दुखारी हुए तथा वानरों ने उस दुख में उ... सहायता की तथा रावण-कुम्भकर्ण-रूप हर-गण उनके हाथों... में मारे जाकर मुक्त हुए। यथा—

बंचेहु मोहिं जवनि धरि देहा; सोइ तनु धरहु साप मम...

मम अपकार कीन्ह तुम भारी; नारि-बिरह तुम होहु दु...

कपि-आकृति तुम कीन्ह हमारी; करिहहिं कीस सहाय तुम्हारी (...

इस पर ब्रह्मवाणी हुई—

नारद-बचन सत्य सब करिहौं; परम शक्ति समेत अवतरिहौं (...

पुनः नारद-वचन—

मोर साप करि अंगीकारा; सहत राम नाना ...

ऐसे प्रभुहिं बिलोकउँ जाई ; पुनि न बनिहि अस अवसर आई
यह बिचारि नारद करबीना ; गये जहाँ प्रभु सुख-आसीना (आ०)

चौथे कल्प में साकेत-लोक से अवतार हुआ, सो इसकी कथा अपर हेतु सुनु सैल-कुमारी; कहौं बिचित्र कथा बिस्तारी से लेकर एहि सब रुचिर चरित मैं भाखा तक के अन्तर्गत वर्णित है। सो दिखाते हैं—

अपर हेतु सुनु सैल-कुमारी ; कहउँ बिचित्र कथा बिस्तारी
जेहि कारन अज अगुन अरूपा ; ब्रह्म भयउ कोसलपुर-भूपा
जो प्रभु बिपिन फिरत तुम देखा ; बंधु-समेत धरे मुनि-भेखा
जासु चरित अवलोकि भवानी ; सती-सरीर रहिहु बौरानी
अजहुँ न छाया मिटति तुम्हारी ; तासु चरित सुनि भ्रम-रुज-हारी
लीला कीन्हि जो तेहि अवतारा ; सो सब कहिहउँ मति-अनुसारा
तीरथ बर नैमिष बिख्याता ; अतिपुनीतसाधक-सिधि-दाता
बसहि तहाँ मुनि-सिद्ध-समाजा ; तहँ हिय हरखि चलेउ मनुराजा
पहुँचे जाइ धेनुमति-तीरा ; हरषि नहाने निरमल नीरा

द्वादस अच्छर मंत्र पुनि, जपहिं सहित अनुराग ;
बासुदेव-पद-पंकरुह, दंपति मन अति लाग।

अखंड अनंत अनादी ; जेहि चिंतहिं परमारथबादी
पुनि नेति जेहि बेद निरूपा ; चिदानंद निरुपाधि अनूपा

संभु बिरंचि बिस्नु भगवाना; उपजहिं जासु अंस ते नाना
ऐसेउ प्रभु सेवक बस अहई; भगत हेतु लीला तनु गह
उर अभिलाष निरंतर होई; देखिय नयन परम प्रभु सो
प्रभु सर्बज्ञ दास निज जानी; गति अनन्य तापस नृप रानी
माँगु माँगु बर भइ नभ बानी; परम गँभीर कृपामृत-सानी

स्रवन-सुधा-सम बचन सुनि, पुलक प्रफुल्लित गात;
बोले मनु करि दंडवत, प्रेम न हृदय समात।

जौं अनाथ हित हम पर नेहू; तौ प्रसन्न होइ यह बर दे
जो सरूप बस सिव मन माहीं; जेहि कारन मुनि जतन करा
जो भुसुंडि-मन-मानस-हंसा; सगुन अगुन जेहि निगम प्रसंस
देखहिं हम सो रूप भरि लोचन; कृपा करहु प्रनतारति-मोच
दंपति बचन परम प्रिय लागे; मृदुल बिनीत प्रेम-रस-पाग
भगत-बछल प्रभु कृपा-निधाना; बिस्वबास प्रगटे भगवान

नीलसरोरुह नीलमनि नील-नीर-धर-स्याम;
लाजहिं तनु-सोभा निरखि कोटि कोटि सत काम।
बोले कृपानिधान पुनि अति प्रसन्न मोहि जानि;
माँगहु बर जोइ भाव मन महादानि अनुमानि।

सो तुम जानहु अंतरजामी; पुरवहु मोर मनोरथ [illegible]
सकुच बिहाइ माँगु नृप मोही; मोरे नहिं अदेय क[illegible]

दानि-सिरोमनि कृपानिधि नाथ कहहुँ सतभाउ ;
चाहउँ तुम्हहिं समान सुत प्रभुसन कवन दुराउ ।
देखि प्रीति सुनि बचन अमोले ; एवमस्तु करुनानिधि बोले
आपु सरिस खोजउँ कहँ जाई ; नृप तव तनय होब मैं आई

अतएव स्वायंभुवमनु और सतरूपा अवध-नृपति दशरथ और कौशल्या हुए, तिनके घर में साकेतविहारी परात्पर ब्रह्म ने नर-रूप में अवतार लिया । भानुप्रताप रावण, अरिमर्दन कुंभकर्ण, सचिव विभीषण और भानुप्रताप के वंशवाले सब राक्षस हुए जो श्रीराम-समर में तन त्याग मुक्त हुए और विभीषण को श्रीरामजी ने लंका का राज्य दिया ।

शंका—साकेतविहारी भगवान् तो सनातन मनुष्य की नाईं दो ही भुजावाले हैं, फिर उनका नर-तन धारण करना कैसा ?

षोडश वर्ष किशोर राम नित सुंदर राजैं ;
राम-रूप को निरखि विभाकर कोटिक लाजैं । (ध्या॰मं॰)

उत्तर—साकेत-लोक में भगवान् एकरस में विराजमान थे और श्रीअवध में अवतार लेने पर बाल, कुमार, पौगंड, किशोर आदि अवस्थाएँ धारण-पूर्वक रोदन, विरह, विकलता, हास्य आदि नरवत् माधुर्य-श्री[illegible] आपन्न हुए और अपने नर-चरित्र द्वारा संसार के जीवों को सुनि [illegible]कर उनका कल्याण किया । यथा—

स्वायंभुव मनु अरु सतरूपा; जिनते भइ नर-सृष्टि अनूपा (बा०)

* * *

मनु से भये मनुज सुरराया; तेहिते मानुष नाम कहाया (वि०सा०)

श्रीराम-अवतार लेने के अनेक कारण हैं—

बिस्नु जो सुर-हित नर-तनु-धारी; ज्ञानधाम श्रीपति असुरारि
राम-भगत-हित नर-तनु-धारी; सहिसंकट किये साधु सुखारी (बा०)
जब जब अवधपुरी रघुबीरा; धरहिं भगत हित मनुज-सरीरा
जब जब राम मनुज-तनु धरहीं; भगत-हेतु लीला बहु-करहीं (उ०)
गो द्विज धेनु देव हितकारी; कृपासिंधु मानुष-तन-धारी (सुं०)

भगत भूमि भूसुर सुरभि, सुरहित लागि कृपाल;
करत चरित धरि मनुज-तनु, सुनत मिटहिं जग-जाल। (अ०)
भगत हेतु भगवान प्रभु, राम धरेउ तनु भूप;
किये चरित पावन परम, प्राकृत नर अनुरूप। (उ०)

मीन कमठ सूकर नरहरी; बावन परसुराम बपुधरी
जबजब नाथ सुरन दुख पावा; नाना तनु धरि तुम्हहिं नसावा (लं०)

* * *

जब जब होइ धर्म की हानी; बाढ़हिं असुर अधम अभि[illegible]
करहिं अनीति जाय नहिं बरनी; सीदहिं बिप्र धेनु सु[illegible]
तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा; हरहिं कृपानिधि स[illegible]

असुर मारि थापहिं सुरन्ह, राखहिं निजस्तुति सेतु;
जग बिस्तारहिं बिसद जस, राम जन्म कर हेतु। (बा०)
स्तुति-सेतु-पालक राम तुम जगदीस माया जानकी;
सुरकाज धरि नरराज तन चले दलन खल निसिचर अनी।
नर-तन धरेउ संत-सुर काजा; कहहु करहु जस प्राकृत राजा
राम-जन्म जग-मंगल-हेतू
प्रभु अवतरेउ हरन महि-भारा
धर्म-हेतु अवतरेउ गोसाईं
वेद-धर्म-रक्षक तुम्ह भ्राता
हरि अवतार हेतु जेहि होई; इदमित्थं कहि जात न कोई

यहाँ तक श्रीपार्वतीजी के तीसरे प्रश्न का कि "भगवान् ने किस हेतु नर-तन धारण किया ?" उत्तर दिया गया। अब श्रीपार्वतीजी चौथा प्रश्न करती हैं—

(प्रश्न ४)

श्रीपार्वतीजी महारानी पूछती हैं—

बालचरित पुनि कहहु उदारा। (बा०)

(उत्तर ४)

श्रीशिवजी महाराज उत्तर देते हैं—

सुनि सिसु-रुदन परम प्रिय बानी; संभ्रम चलि आईं सब रानी

जाकर नाम सुनत सुभ होई; मोरे गृह आवा प्रभु सो
अनुपम बालक देखिन्हि जाई; रूप-रासि गुन कहि न सिरा
कबहुँ उछंग कबहुँ बर पलना; मातु दुलारहिं कहि प्रिय ललन
एहि बिधि सिसु-बिनोद प्रभु कीन्हा; सकल नगरबासिन्ह सुखदीन्ह
लेइ उछंग कबहुँक हलरावइ; कबहुँ पालने घालि झुलाव
गइ जननी सिसु पहिं भयभीता; देखा बाल तहाँ पुनि सूत
इहाँ उहाँ दुइ बालक देखा; मतिभ्रम मोर कि आन बिसेख
देखि राम जननी अकुलानी; प्रभु हँसि दीन्ह मधुर मुसकान

देखरावा मातहि निज अद्‌भुत रूप अखंड;
रोम रोम प्रति लागे कोटि कोटि ब्रह्मंड।

हरि जननी बहु बिधि समुझाई; यह जनि कतहुँ कहसि सुनु मा

बार बार कौसल्या बिनय करइ कर जोरि;
अब जनि कबहूँ ब्यापइ प्रभु मोहि माया तोरि।

बाल-चरित हरि बहु बिधि कीन्हा; अति आनँद दासन्ह कहँ दीन्ह
बालचरित अति सरल सुहाये; सारद सेख संभु स्रुति गा

ब्यापक अकल अनीह अज निर्गुन नाम न रूप;
भगत हेतु नाना बिधि करत चरित्र अनूप। (बा०)

बालक श्रीरामजी देने में उदार हैं, अथवा उदार-शब्द श्री
शिवजी का विशेषण है, अथवा श्रीरामजी का बाल-चरित भुशुं

और शंकरादि सबको प्रिय लगता है, इससे उदार है, क्योंकि उनको श्रीरामजी के बाल-रूप का ही ध्यान इष्ट है। यथा-भुशुंडि-वचन—

बालक रूप रामकर ध्याना; कहेउ मोहिं मुनि कृपानिधाना (उ०)
इष्टदेव मम बालक रामा; सोभा बपुष कोटि सत कामा (उ०)

शंकर-वचन—

सोइ मम इष्टदेव रघुबीरा; सेवत जाहि सदा मुनि धीरा
बंदौं बाल-रूप सोइ रामू; सब बिधि सुलभ जपत जिसु नामू
मंगल-भवन अमंगल-हारी; द्रवौ सो दसरथ-अजिर-बिहारी (बा०)
एहि महँ रघुपति नाम उदारा; अति पावन पुरान-स्रुति-सारा (बा०)
मनभावत बर माँगौं स्वामी; तुम उदार उर-अंतरयामी (उ०)
सुनहु उदार परम रघुनायक; सुंदर अगम सुगम बरदायक (आ०)
मुनिरंजन भंजन महिभारहिं; तुलसिदास के प्रभुहि उदारहिं (उ०)
सब उदार सब पर-उपकारी; बिप्र-चरन-सेवक नरनारी (उ०)
जहँ तहँ पियहिं बिबिध मृगनीरा; जिमि उदारगृह जाचक भीरा (आ०)
तबकि चलहि अस गाल तुम्हारा; अस बिचार भजु राम उदारा (लं०)
ताहि देइ गति राम उदारा; शबरी के आश्रम पगुधारा (आ०)

ऐसो को उदार जगमाहीं
बिनु सेवा जो द्रवै दीन पर, राम-सरिस कोउ नाहीं (वि०प०)

नाथ जबहिं कोशलपुर होइहै तिलक तुम्हार,
तब मैं आउब सुनहु प्रभु, देखन चरित उदार। (लं०)
सोइ सच्चिदानंद घन कर नरचरित उदार। (उ०)

उत्तरकांड में बालचरित का जो विविध प्रकार का वर्णन त
सिसु-चरित कहेसि मन लाई से लेकर बाल-चरित कहि विविध
विधि मन महँ परम उछाह तक श्रीभुशुंडिजी ने किया है, उसका
संबंध बालकांड में श्रीशिवजी-कृत
सुनि सिसु-रुदन परम प्रिय बानी, संभ्रम चलि आईं सब रानी
से आरंभ करके यह सब चरित कहा मैं गाई तक है, सो जानिए।

(प्रश्न ५)

अब श्रीपार्वतीजी पाँचवाँ प्रश्न करती हैं—

कहहु जथा जानकी बिवाही। (बा०)

इस प्रश्न का उत्तर उत्तरकांड में जो ऋषि आगमन कहेसि
पुनि श्रीरघुबीर-बिवाह संक्षेप में कहा गया है, उसका सविस्त
वर्णन बालकांड में आगिल कथा सुनहु मन लाई। बिस्वामित्र
महामुनि ज्ञानी से लेकर

सिय-रघुबीर-बिवाह जे सप्रेम गावहिं सुनहिं;
तिन कहँ सदा उछाह मंगलायतन राम-जस।

(३६१ दोहा) तक है। श्रीविश्वामित्रजी से अपने यज्ञ-रक्ष

के लिये श्रीदशरथजी से श्रीराम-लक्ष्मण को माँग ले गए और उन्होंने श्रीराम-विवाह के लिये सब से आगे उद्योग किया। यथा—

देहु भूप मन हर्षित तजहु मोह अज्ञान;
धर्म सुजस प्रभु तुम कहँ इन कहँ अति कल्यान।

'अति कल्याण'-पद का भाव यह है कि विवाह करा लाने का वचन दिया है। यथा—

सुजस रावरो लाभ ढोटन कहँ मुनि सनाथ सब कीजै (गी०)

और विवाह को 'कल्याण-कार्य' कहते भी हैं। यथा—

उमा-शंभु-बिवाह जे नर कहहिं, सुनहिं जे गावहीं;
'कल्यान-काज' विवाह मंगल सर्वदा सुख पावहीं।

(उत्तर ५)

श्रीजानकीजी का विवाह तीन विधि से हुआ—(१) स्वयंवर-द्वारा, (२) धनुषभंग-प्रतिज्ञा-पूर्ति-द्वारा, (३) यथा-वंश-रीत्यनुसार। अब हम पहले स्वयंवर का वर्णन करते हैं। स्वयंवर दो प्रकार का होता है। एक तो लड़की स्वयं लड़के को वरे, सो श्रीजानकीजी ने किया। यथा—

चली राखि उर श्यामल मूरति
लोचन मग्ग रामहि उर आनी
चारु चित्र भीतर लिख लीने

दूसरा जयमाल द्वारा स्वयंवर-विवाह-रीत्यनुसार। यथा—

गावहिं छवि अवलोकि सहेली; सिय जयमाल राम-उर मेली (बा०)

पहिराई जयमाल जानकी जुवतिन्ह मंगल गायो;

तुलसी सुमन बर्षि हर्षे सुर सुजस तिहूँपुर छायो। (गी०)

दूसरा श्रीजनकजी की प्रतिज्ञा द्वारा शिव-धनुष तोड़नेहारे के साथ ब्याह हुआ। यथा—

प्रण बिदेह को राखि राम खंडेउ धनुष शंकर सिय बिवाहहिं राम (छ० रा०)

धनु तोरे सो बरै जानकी रंक होइ का राउ (गी०)

सोइ पुरारि कोदंड कठोरा; राजसमाज आज जेइ तोरा

त्रिभुवन जय समेत बैदेही; बिनहिं बिचार बरै हठि तेही

तेहि छन राम मध्य धनु तोरा; भरेउ भुवन धुनि घोर कठोरा

कोदंड भंजेउ राम तुलसी जयति वचन उचारहीं

प्रभु दोउ चाप खंड महि डारे

भंजेउ राम शंभु-धनु भारी

रहा विवाह चाप-आधीना

बिस्वबिजय-जस जानकी पाई

टूटत ही धनु भयउ बिवाहू; सुर नर नारि बिदित सब काहू

महि पाताल नाक जस ब्यापा; राम बरी सिय भंजेउ चापा

तीसरा ब्याह यथा-वंश-व्यवहार-परंपरा से हुआ। यथा—

तदपि जाइ तुम्ह करहु अब जथा-बंश-ब्यवहार;
बूझि बिप्र, कुल-बृद्ध, गुरु, बेद-बिदित आचार।

राजा सब रनिवास बोलाई; जनक-पत्रिका बाँचि सुनाई
भूप भरत पुनि लिए बोलाई; हय गय स्यंदन साजहु जाई
चलहु बेगि रघुबीर-बराता; सुनत पुलक पूरे दोउ भ्राता
भरत सकल साहनी बोलाये; आयसु दीन मुदित उठि धाये
तिन्ह सब छैल भये असवारा; भरत-सरिस सब राजकुमारा

चढ़ि चढ़ि रथ बाहिर नगर लागी जुरन बरात;
होत सगुन सुंदर सबन्हि जो जेहि कारज जात।

राज-समाज एक रथ साजा; दूसर तेजपुंज अति भ्राजा

तेहि रथ रुचिर बसिष्ठ कहँ हरषि चढ़ाइ नरेस;
आपु चढ़ेउ स्यंदन सुमिरि हर गुरु गौरि गनेस।

करि कुलरीति बेदबिधि राऊ; देखि सबहि सब भाँति बनाऊ

मंगलमय कल्यानमय अभिमत-फल-दातार;
जनु सब साँचे होन हित भये सगुन इक बार।

राम-सरिस बर दुलहिन सीता; समधी दसरथ जनक पुनीता
ग्रह तिथि नखत जोग बर बारू; लगन सोध बिधि कीन्ह बिचारू

धेनु-धूलि-बेला बिमल सकल-सुमंगल-मूल;

बिप्रन्ह कहेउ बिदेह सन जानि सगुन अनुकूल।

सतानंद तब सचिव बोलाये; मंगल सकल साज सब लाये

सिव समझाये देव सब जनि आचरज भुलाहु;
हृदय बिचारहु धीर धरि सिय-रघुबीर-बिआहु।

बेद-बिहित अरु कुल-आचारू; कीन्ह भली बिधि सब ब्यवहारू
एहि बिधि राम मंडपहि आए; अरघ देइ आसन बैठाए
मिले जनक दसरथ अतिप्रीती; करि बैदिक लौकिक सब रीती
जग बिरंच उपजावा जब तें; देखे सुने ब्याह बहु तब तें
सकल भाँति सम साज समाजू; सम समधी देखे हम आजू

मंडप बिलोकि बिचित्र रचना रुचिरता मुनिमन हरे।

बिप्रबधू कुलबृद्ध बोलाई; करि कुलरीति सुमंगल गाई
एहि बिधि सीय मंडपहिं आई; प्रमुदित सांति पढ़हिं मुनिराई
तेहि अवसरकर बिधि ब्यवहारू; दुहुँ कुलगुरु सब कीन्ह अचारू

कुल-रीति प्रीति-समेत रबि कहि देत सब सादर कियो;
एहि भाँति देव पुजाइ सीतहि सुभग सिंहासन दियो।

होम समय तनु धरि अनल अति सुख आहुति लेहिं;
बिप्र-बेष धरि बेद सब कहि बिवाह बिधि देहिं।

पढ़हिं बेद मुनि मंगल बानी; गगन सुमन झरि अवसर जानी

बर-कुँअरि-करतल जोरि साखोचार दोउ कुलगुरु करैं;

भयो पानिगहन बिलोकि बिधि सुर मनुज मुनि आनँद भरें ।
सुखमूल दूलह देखि दंपति पुलक तनु हुलस्यो हियो;
करि लोक-बेद-बिधान कन्यादान नृपभूषन कियो ॥
भरि भुवन रहा उछाह राम-बिवाह भा सबही कहा;
केहि भाँति बरनि सिरात रसना एक यह मंगल महा ।
तब जनक पाइ बसिष्ठ आयसु ब्याह-साज सँवारिकै ;
मांडवी स्रुतिकीरति उरमिला कुअँरि लईं हँकारिकै ॥
कुस-केतु-कन्या प्रथम जो गुन-सील-सुख-सोभा-मई ;
सब रीति-प्रीति-समेत करि सो ब्याहि नृप भरतहि दई ।
जानकी-लघु-भगिनी सकल सुंदरि-सिरोमनि जानिकै ;
सो जनक दीन्ही ब्याहि लषनहि सकल बिधि सनमानिकै ॥
जेहि नाम स्रुतिकीरति सुलोचनि सुमुखि सब-गुन-आगरी ;
सो दई रिपुसूदनहि भूपति रूप-सील-उजागरी ।
अनुरूप बर दुलहिन परसपर लखि सकुचि हिय हरषहीं ;
सब मुदित सुंदरता सराहहिं सुमन सुरगन बरषहीं ।
सुंदरी सुंदर बरन्ह सह सब एक मंडप राजहीं ;
जनु जीव उर चारिउ अवस्था बिभुन सहित बिराजहीं ।
मुदित अवधपति सकल सुत बधुन्ह-समेत निहारि ;
जनु पाये महिपाल-मनि क्रियन्ह सहित फल चारि ।

जस बिवाह की बिधि स्रुति गाई; महामुनिन्ह सो सब करवाई
जस रघुबीर-ब्याह-बिधि बरनी; सकल कुँअर ब्याहे तेहि करनी

शंका—"सिय जयमाल राम-उर मेली" रामजी के उर में कौन वस्तु की जयमाला पहनाई ?

उत्तर—गोसाईं जी ने लिखा है—

कर सरोज जयमाल सुहाई; बिस्व-बिजय सोभा जेहि छाई

इसमें सरोज-शब्द देहरी-दीप-न्याय से रक्खा हुआ है, यह कर का भी विशेषण है तथा जयमाल का भी विशेषण है। किंतु ग्रंथांतर में अनेक प्रकार की जय मालायें लिखी हैं। किसी ने स्वर्ण-माल, किसी ने दूर्बा-माल, किसी ने मधूप-माल इत्यादि; किंतु गोसाईंजी ने अपनी गीतावली में कमल की जयमाल लिखी है, इसलिये गोसाईंजी का तात्पर्य कमल की जयमाल से ही है। यथा—

जयमाल जानकी जलज कर लई है।
सुमन सुमंगल सगुनकी बनाई मंजु
मानहुँ मदनमाली आपु निर्मई है;
मानस ते निकसि बिसाल सुतमाल पर
मानहुँ मराल-पाँति बैठी बन गई है। (गी०)

(प्रश्न ६)

अब श्रीपार्वतीजी फिर प्रश्न करती हैं—

राज तजा सो दूषण काही ?

इस प्रश्न का उत्तर अयोध्याकांड में श्रीगुरुचरण-सरोज रज से लेकर भरत-चरित कर नेम तुलसी जे सादर सुनहिं, सियाराम-पद प्रेम अवशि होइ भव-रस-विरति तक में है।

(उत्तर ६)

श्रीशिवजी महाराज उत्तर देते हैं—

पिता बचन तजि राज उदासी; दंडक बन विचरत अविनासी (बा०)
तात बचन तजि राज काज सुर चित्रकूट मुनि भेष धरेउ (गी०)
बहुरि राम अभिषेक-प्रसंगा; पुनि नृपबचन राज-रस-भंगा (उ०)
कहि सप्रेम सब कथा-प्रसंगू; जेहि बिधि राम-राज-रस-भंगू (अ०)
राज त्यागि बन चले असुर मारन सुरकाज सँवारन (छ० रा०)
राजभवन सुख बिलसत सिय-संग-राम ;
बिपिन चले तजि राज सो बिधिबर बाम । (ब० रा०)
राजिवलोचन राम चले तजि बाप को राज बटाउ की नाईं । (क०)

महाराज दशरथ के पास रानी कैकेयी के दो वरदान थाती थे, जो देवता और शारदा द्वारा प्रेरित मंथरा-दासी के उपदेश से कैकेयी ने महाराज दशरथ से वर माँगा । यथा—

सुतहिं राज रामहिं बनबासू
मन भावत बर माँगौं जी का ; देहु एक बर भरतहिं टीका

तापस बेष बिसेष उदासी ; चौदह बर्ष राम बनबासी

महाराज दशरथ ने कैकेयी का विवाह करते समय कैकेयी के पिता केकयराज से प्रतिज्ञा की थी कि कैकेयी से जो पुत्र होगा वही राजगद्दी का अधिकारी होगा, सो इस प्रतिज्ञा का पक्का पंचनामा लिखाकर केकयराज ने अपनी कन्या का महाराज दशरथ के साथ विवाह किया था। यथा—

कैकेय्यां मम कन्यायां यस्तु पुत्रो भविष्यति ;
तस्मै राज्यं ददात्वेवं गृह्णातु मम कन्यकाम् ।
अनेन समयेनापि विवाहं कुरु भूमिप ;
यथा वदसि भो विप्र तथैव करवाण्यहम् ।
(सत्योपाख्यान ८, १३-२०)

कैकइ ब्याहन के समय सुत को हारे राज ;
ताते गुरु गुरुमत कहे निज मुख कहे न लाज । (मा०म०)

तात्पर्य यह कि दशरथजी धर्मसंकट में थे। क्योंकि रघुवंश की मर्यादानुसार बड़े पुत्र के रहते हुए छोटे को राज्य देना अनुचित था और अपनी प्रतिज्ञा के विचार से उन्हें भरतजी को राज्य देना उचित था, इसलिये कुलपुरोहित श्रीवशिष्ठजी महाराज से अपना कर्तव्य पूछते हैं और श्रीवशिष्ठजी महाराज उन्हें कुल-धर्म के अनुसार श्रीरामजी महाराज को युवराज-पद देना नीति-संगत

जाते हैं। किंतु श्रीरामजी का अवतार तो धर्म की रक्षा करने के निमित्त हुआ था, इस कारण उन्होंने अन्याय-पूर्ण राज्य का लेना अंगीकार नहीं किया। यथा—

रघुबंसिन्ह कर सहज सुभाऊ; मन कुपंथ पगु धरे न काऊ (बा०)
जन्मे एकसंग सब भाई; भोजन शयन केलि लरिकाई
करनवेध उपबीत बिवाहा; संग संग सब भयउ उछाहा
बिमल बंस यह अनुचित एकू; बंधु बिहाइ बड़ेहि अभिषेकू
प्रभु सप्रेम पछितानि सुहाई; हरउ भगत मन की कुटिलाई

राज हारिकर भरत कहँ मोहिं करत अभिषेक;
तजे बचन तासो दुरे यह अनुचित अबिबेक।

(मानसतत्त्वप्रकाश)

रुज जुत भू बिन भरतहिं पर नृपते लघुराज;
उभय भूप कर बनहिं महँ तब राजहिं निज भ्राज।

(अभिप्रायदीपक)

तात्पर्य यह कि पृथ्वी तो रोगयुक्त अर्थात् पाप-रोग से ग्रसित अर्थात् इस पर रावणादि पापी राजा राज्य करते हैं और स्नेह-पूर्ण भाई भरत विद्यमान नहीं हैं, और अन्य (बालि और रावण) राजाओं के विद्यमान होने से यह राज्य छोटा या तुच्छ-सा है, श्री-रामचंद्रजी महाराज कहते हैं, मैं वन जाकर और वन ही में रहकर दो

राजों को बनाकर (पंपापुर में बालि-राज्य को अपने हाथ से सुग्रीव को समर्पण करके और लंका-राज्य अपने हाथ से विभीषण को समर्पण करके) तब अपने (पूर्ण चक्रवर्ती) राज्य पर विराजमान होऊँगा।

और भी ग्रंथांतर में कहा है—

धरनि-सुता संबंध भइ सिय-रघुवीर-बिवाह ;
जासु नाम महि-भार-हर राज-दोष तेहि नाह ?

तात्पर्य यह कि जिस धरती की कन्या सीताजी से रामजी का ब्याह हुआ उसी धरती का भार हरनेवाले श्रीरामजी का नाम है फिर बिना धरती का भार हरण किए रामजी राज्य करने लगें, तो क्या उनको दोष न लगेगा ?

एक बात और भी—

रघुकुल-रीति सदा चलि आई ; प्राण जायँ बरु बचन न जा[ई]

रामजी महाराज कहते हैं, मैं कैसे राज्य ले सकता हूँ जब [कि] मेरे पूज्य पिता उसे भाई भरत के लिये अपनी प्रतिज्ञा द्वारा मात[ा] कैकेयी से वचन हार गए हैं, रघुवंशियों की तो यह सदा से री[ति] चली आई है कि प्राण भले ही चले जायँ परंतु मुख से निकले हु[ए] वचन कदापि मिथ्या नहीं हो सकते।

शंका—फिर श्रीरामजी ने वन से लौटकर क्यों राज्य ग्रह[ण] किया ?

उत्तर—प्रथम श्रीरामजी धर्मधुरीण हैं, राज्य लोलुप नहीं हैं। वह सदैव धर्म का ही पालन करते हैं। यथा—

नाहिन राम राज्य के भूखे ; धर्मधुरीन बिषय-रस-रूखे
बेद-बिहित सम्मत सबही का ; जेहि पितु देइ सो पावै टीका
पिता दीन्ह मोहिं कानन-राजू (अ०)
कोसलेस दसरथ के जाये ; हम पितु बचन मानि बन आये (कि०)
तात बचन पुनि मातु हित भाइ भरत अस राउ (अ०)

श्रीरामजी महाराज सुमंत से कहते हैं कि भरतजी से संदेसा कह देना कि यह राज्य तुमको नीति से मिला है, सो इसे न तजना, सदैव नीति का पालन करना। यथा—

कहब सँदेस भरत के आये ; नीति न तजब राजपद पाये (अ०)

दूसरे श्रीरामजी सदैव भक्त और प्रेम के वश हैं। अपने भक्त की भावना पूरी करना वह परम धर्म समझते हैं। इसलिये जब वह वन से लौटकर आये और भाई भरतजी ने प्रेम और भक्ति के साथ उनको राज्य समर्पण किया, तो उस समय राज्य न ग्रहण करने से भक्त का अपमान होता, इसलिये, भक्त-वत्सलता के कारण, उन्हें राज्य ग्रहण करना पड़ा। यथा—

लोभ न रामहि राज कर, बहुत भरत पर प्रीति (अ०)
भक्ति अवसहु बस करी (आ०)

रामहिं केवल प्रेम पियारा ; जानि लेहु जो जाननिहारा
राम सदा सेवक रुचि राखी ; वेद पुरान साधु सुर साखी
सौंपेहु राज राम के आये ; सेवा करहु सनेह सोहाये
जेठ स्वामि सेवक लघु भाई; यह दिनकर-कुल-रीति सदाई (अ०)

अतएव, पुनः राज्य अंगीकार करने में कोई दोष नहीं हुआ।

अब यह दिखलाते हैं कि यह प्रसंग, जो अयोध्याकांड में वर्णित है, उस प्रसंग का संप्रसार है जो उत्तरकांड में श्रीभुशुंडि द्वारा, संक्षेप में, वर्णित हुआ और जो 'मानस-मूल' के नाम से प्रसिद्ध है। यथा—

बहुरि राम-अभिषेक-प्रसंगा ; पुनि नृप-बचन राज-रस-भंगा
पुरबासिन्ह कर बिरह बिषादा ; कहेसि राम-लछिमन-संबादा
बिपिन गवन केवट-अनुरागा ; सुरसरि उतरि निवास प्रयागा
बालमीकि-प्रभु-मिलन बखाना ; चित्रकूट जिमि बस भगवाना
सचिवागवन नगर नृप मरना ; भरतागवन प्रेम बहु बरना
करि नृप-क्रिया संग पुरबासी ; भरत गये जहँ प्रभु सुख-रासी
पुनि रघुपति बहु बिधि समुझाये ; लेइ पादुका अवधपुर आये
भरत रहनि (उ०)........

(प्रश्न ७)

अब श्रीपार्वतीजी सातवाँ प्रश्न करती हैं कि श्रीरामजी ने वन में वास करके जो अपार चरित किए, सो कहिए। यथा—

बन बसि कीन्हे चरित अपारा (बा०)

शंका——श्रीरामचरित तो सबही अपार हैं, फिर वन-चरित को ही अपार क्यों कहा गया ? यथा—

परम मनोहर चरित अपारा ; करत फिरत चारिउ सुकुमारा (बा०)
रामचरित सत कोटि अपारा ; स्तुति सारदा न बरनै पारा (उ०)
रघुबीर-चरित अपार बारिधि पार कबि कौनेउ लहेउ
कहँ रघुपति के चरित अपारा ; कहँ मति मोर निरत संसारा (बा०)
नाना भाँति राम-अवतारा ; रामायण सत कोटि अपारा
सकल अमित अनंत रघुनाथा
निजनिजमतिमुनिहरिगुनगावहिं;निगमसेषसिवपारनपावहिं उ०

चरित ही क्यों, श्रीरामजी के नाम-रूप-लीला-गुण सभी अपार हैं।

उत्तर——जब पार्वतीजी सती-तन में थीं, तो एक बार श्रीशिवजी के साथ कुंभज-ऋषि के यहाँ गई थीं, फिर मुनि से बिदा होकर जब वे श्रीशंकरजी के साथ अपने स्थान पर लौटी जा रही थीं, तो वन में श्रीरामजी को देखकर जब उन्हें भ्रम हुआ और वह श्रीशिवजी से पूछकर श्रीरामजी की परीक्षा करने गईं, तो श्रीरामजी ने उन्हें अपार चरित दिखाया था। यथा—

मैं वन दीख राम-प्रभुताई ; अति भय-विकल न तुमहिं सुनाई (बा०)

* * *

क्या प्रभुताई देखी, सो दिखाते हैं—

जाना राम सती दुख पावा ; निज प्रभाउ कछु प्रगटि जनावा
सती दीख कौतुक मग जाता ; आगे राम सहित श्रीभ्राता
फिरि चितवा पाछे प्रभु देखा ; सहित बंधु सिय सुंदर बेखा
जहँ चितवहिं तहँ प्रभु आसीना ; सेवहिं सिद्ध मुनीस प्रबीना
देखे सिव बिधि बिष्णु अनेका ; अमित प्रभाव एक तें एका
बंदत चरन करत प्रभु-सेवा ; बिबिध बेष देखे सब देवा

सती बिधात्री इंदिरा देखी अमित अनूप ;
जेहि जेहि बेष अजादि सुर तेहि तेहि तन अनुरूप ।

देखे जहँ तहँ रघुपति जेते ; सक्तिन्ह सहित सकल सुर तेते
जीव चराचर जे संसारा ; देखे सकल अनेक प्रकारा
पूजहिं प्रभुहिं देव बहु बेखा ; राम-रूप दूसर नहिं देखा
अवलोके रघुपति बहुतेरे ; सीता-सहित न बेष घनेरे
सोइ रघुबर सोइ लछिमन सीता ; देखि सती अति भई सभीता (बा.)

इस कारण, पार्वतीजी ने वनचरित को 'अपार' विशेषण दिया । पुनः 'अपार' विशेषण का कारण यह है कि अन्य प्रश्नों के उत्तर तो एक-एक कांड में ही हैं और इस प्रश्न का उत्तर ३ कांडों में है । पुनः श्रीरामजी के वनचरित इसलिये अपार हैं कि कोई उनका पार नहीं पा सका, क्योंकि कितने ही चरित भगवान् ने गु

किए हैं जिनको देवादिकों की कौन कहे, श्रीलक्ष्मणजी भी नहीं जान सके । यथा—

लछिमनहू यह चरित न जाना; जो कछु चरित रचा भगवाना (आ.)
प्रभु-चरित काहु न लखेउ नभ सुर सिद्ध मुनि देखत खरे;
देखहिं परस्पर राम कर संग्राम रिपु-दल लरि मरे।
खरदूषण बिराध-बध पंडित (उ०) —इत्यादि,

(उत्तर ७)

अब श्रीपार्वतीजी के "बन बसि कीन्हे चरित अपारा" प्रश्न का उत्तर देते हैं। इस प्रश्न का उत्तर आरण्यकांड में मूलं धर्मतरोर्विवेकजलधेः से आरंभ करके, समस्त आरण्यकांड, समस्त किष्किधाकांड और समस्त सुंदरकांड में सकल सुमंगलदायक तक, तीन कांडों में, सविस्तर दिया गया है। यह प्रसंग उत्तरकांड (मानस-मूल) भुशुंडि-गरुड़-संवाद की निम्न-लिखित कथा का विस्तार-मात्र है—

चित्रकूट गिरि करहु निवासू ; जहँ तुम्हार सब भाँति सुपासू (अ.)
एहि बिधि सीय-सहित दोउ भाई ; बसहिं बिपिन सुरमुनि-सुखदाई
अब प्रभुचरित सुनहु अतिपावन ; करत जे बन सुर नर मुनि भावन
जब रघुनाथ समर रिपु जीते ; सुर नर मुनि सबके भय बीते (आ०)
रघुपति चित्रकूट बसि नाना ; चरित किए श्रुति-सुधा-समाना
पंचबटी बस श्रीरघुनायक ; करत चरित सुरमुनि-सुखदायक (आ०)

भरत-रहनि सुरपति-सुत-करनी ; प्रभु अरु अत्रि-भेंट पुनि बरनि
कहि बिराध-बध जेहि बिधि देह तजी सरभंग ;
बरनि सुतीक्षण प्रेम पुनि प्रभु अगस्त सतसंग ।
कहि दंडकबन पावनताई ; गृध्र-मैत्री पुनि तेहि गा
पुनि प्रभु पंचबटी कृत बासा ; भंजी सकल मुनिन्ह कै त्रा
पुनि लछिमन उपदेश अनूपा ; सूपनखा जिमि कीन्ह कुरू
खरदूषन-बध बहुरि बखाना ; जिमि सब मरम दसानन जा
दसकंधर-मारीच-बतकही ; जेहि बिधि भई सो सब तेहि क
पुनि माया सीता कर हरना ; श्रीरघुबीर-बिरह कछु बर
पुनि प्रभु गीधक्रिया जिमि कीन्ही; बधि कबंध सबरिहि गति दी
बहुरि बिरह बरनत रघुबीरा ; जेहि बिधि गये सरोवर ती
प्रभु-नारद-संबाद कहि मारुति-मिलन-प्रसंग;
पुनि सुग्रीवँ मिताई बालि-प्रान कर भंग ।
कपिहि तिलक करि प्रभुकृत सैलप्रबरषन-बास;
बरनत बरषा सरद ऋतु राम-रोष कपि-त्रास ।
जेहि बिधि कपिपति कीस पठाये ; सीता खोजन सकल सिध
बिबर प्रबेस कीन्ह जेहि भाँती ; कपिन्ह बहोरि मिला संपा
सुनि सब कथा समीरकुमारा ; नाँघत भयउ पयोधि अपा
लंका कपि प्रबेस जिमि कीन्हा ; पुनि सीतहि धीरज जिमि दी

बन उजारि रावनहिं प्रबोधी ; पुर दहि नाँघेउ बहुरि पयोधी
आये कपि सब जहँ रघुराई ; बैदेही के कुसल सुनाई
सेन-समेत जथा रघुबीरा ; उतरे जाइ बारिनिधि-तीरा
मिला बिभीषन जेहि बिधि आई ; सागर-निग्रह-कथा सुनाई (उ०)

(प्रश्न ८)

अब श्रीपार्वतीजी आठवाँ प्रश्न करती हैं—

कहहु नाथ ! जिमि रावन मारा (बा०)

(उत्तर ८)

इस प्रश्न के उत्तर में समस्त लंकाकांड जानो । लंकाकांड में रामं कामारिसेव्यं भवभयहरणं से लेकर यह कलिकाल मला-यतन मन करु देखि बिचार ; श्रीरघुनायक नाम तजि नहिं कछु आन अधार तक उत्तर है । मानसमूल उत्तरकांड में यह कथा इस प्रकार है—

सेतु बाँधि कपि-सेन जिमि उतरी सागर पार ;
गयउ बसीठी बीरबर जेहि बिधि बालि-कुमार ।
निसिचर-कीस-लराई बरनेसि बिबिध प्रकार ;
कुंभकरन घननाद कर बल-पौरुष-संहार ।

निसिचर-निकर-मरन बिधि नाना ; रघुपति-रावन-समर बखाना
रावन-बध मंदोदरि-सोका ; राज-बिभीषन देव असोका

सीता-रघुपति-मिलन बहोरी; सुरन्ह कीन्हि अस्तुति कर जो
पुनि पुष्पक चढ़ि कपिन्ह समेता; अवध चले प्रभु कृपा-निके

शंका—श्रीरामजी तो समदर्शी हैं और सब जीवों के रक्षक
वह तो प्राणों के प्राण और जीवों के जीव हैं और प्राणि-मात्र
अमित सुख देनेवाले हैं; फिर उन्होंने रावणादिकों को क्यों मारा
रावणादि भी तो जीव ही हैं ?

उत्तर—भक्त भूमिसुर धेनु हित निसिचर-बध प्रन ईस।

रावणादि निशाचर मुनि, सन्त, सुर, भक्त आदिकों को त्रा
देते थे। यथा—

सीदहिं बिप्र धेनु सुर धरनी (बा०)

तब—

प्रभु अवतरेउ हरन महि-भारा (बा०)
धर्म-हेतु अवतरेउ गोसाईं (कि०)
स्रुति-सेतु-पालक राम तुम जगदीस माया जानकी (अ
धर्म-सेतु-रक्षक सुर-त्राता (सुं०)

और वन में जब उन्होंने देखा—

अस्थि-समूह देखि रघुराया ; पूँछी मुनिन्ह लागि अति दाया
निसिचरनिकरसकलमुनिखाये; सुनिरघुनाथनयनजलछाये (अ

तब श्रीरामजी ने व्यथित होकर—

निसिचर-हीन करउँ महि भुज उठाइ पन कीन्ह ;
सकल मुनिन्ह के आस्रमन्ह जाइ जाइ सुख दीन्ह ।

इसीलिये उन्होंने श्रीजानकीजी से कहा था—

तुम पावक महँ करउ निवासा ; जब लगि करौं निसाचर नासा

उधर रावण का भी प्रण था—

हुइहहि भजन न तामस देहा ; मन क्रम बचन मंत्र दृढ़ एहा
तौ मैं जाइ बैर हठि करिहौं ; प्रभु-सर प्रान तजे भव तरिहौं

श्रीराम रावण दोनों ने प्रण किया था, किंतु मर्यादापुरुषोत्तम होने के कारण श्रीरामजी की प्रतिज्ञा पूरी हुई, रावण की नहीं । यथा—

गरजेउ मरत घोर रव भारी ; कहाँ राम रन हतौं प्रचारी

उधर रावण ने तपस्या द्वारा वर प्राप्त किया था कि नर वानर को छोड़कर और किसी का मारा न मरूँ और वर प्राप्त करके वह पृथिवी पर अधर्म करता था, साधु-महात्माओं को दुख देता था । अब जहाँ भक्तों का दुख दूर करना और संसार में धर्म स्थापित करना भगवान् का कर्तव्य था, वहाँ ब्रह्मादिक देवगण की, जो श्रीरामजी की ही शक्ति से शक्तिमान् हैं, प्रतिज्ञा पूरी करना भी उनका कर्तव्य था, इसलिये नर-रूप धारण करके उन्होंने सब मर्यादाओं का पालन किया । यथा—

रावन मरन मनुज कर जाँचा ; प्रभु बिधि-बचन कीन्ह चह साँचा
हम काहू के मरहिं न मारे ; बानर मनुज जाति दुइ बा
नर के कर आपन बध बाँची ; बिधि कि गिरा किमि होइ असाँचि
जाके बल बिरंचि हरि ईसा ; पालत सृजत हरत दससीस
बिधिहि बिधिता सिवहि सिवता हरिहि हरिता जो दई ;
सो जानकीपति मधुर मूरति मोदमय मंगलमई । (विनय

श्रीरामजी ने नीति के अनुसार शुभाशुभ कर्म-फल देने के लि
रावणादि का वध करके उन्हें मुक्त किया और अपनी प्रतिज्ञा
पालन किया। यथा—

काल-रूप मैं तिन्ह कर ताता ; सुभ अरु असुभ कर्म-फल-दा

शंका—जब श्रीरामजी का "निसिचर-हीन करौं महि" प्र
था, तो फिर उन्होंने विभीषण को क्यों नहीं मारा ? विभीषण
तो निशिचर ही था।

उत्तर—श्रीरामजी की शरण जाने और निशिचर-बुद्धि
जाने से उसका निशिचरत्व नष्ट हो गया और श्रीरामजी शरणाग
वत्सल हैं। यथा—

सरन गये प्रभु काहु न त्यागा ; बिस्व-द्रोह-कृत अघ जेहि ला
कोटि बिप्र-बध लागहिं जाही ; आये सरन तजउँ नहिं त

सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते ;

अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतं मम । (वाल्मीकि)

अब निशिचर कौन हैं, सो सुनिए—

मानहिं मातु पिता नहिं देवा; साधुन्ह-सन करवावहिं सेवा
जिनके यह आचरन भवानी; ते जानहु निसिचर-सम प्रानी

(प्रश्न ६)

अब श्रीपार्वतीजी नवाँ प्रश्न करती हैं—

राज बैठि कीन्हीं बहुलीला; सकल कहहु संकर सुखसीला

इस प्रश्न का उत्तर रामचरितमानस उत्तर कांड में केकीकंठाभ-नीलं से लेकर अस कहि मुनि बसिष्ठ गृह आये तक में दिया गया है। और इसका संबंध मानस-मूल में भुशुंडि-गरुड़-संवाद की निम्न-लिखित चौपाई से है—

कहेसि बहोरि राम-अभिषेका; पुनि बरनन नृप-नीति अनेका

(उत्तर ६)

श्रीशिवजी महाराज उत्तर देते हैं—

जेहि बिधि राम नगर नियराये; बायस बिसद चरित सब गाये
सब द्विज हर्षि देहु अनुसासन; रामचंद्र बैठहिं सिंहासन
सिंहासन पर त्रिभुवन-साईं; देखि सुरन दुंदुभी बजाईं
राम राज बैठे त्रयलोका; हर्षित भये गये सब सोका
दैहिक दैविक भौतिक तापा; राम-राज नहिं काहुहिं ब्यापा

बैर न कर काहू सन कोई; राम-प्रताप बिषमता खोई।
राम-राज कर सुख-संपदा; बरनि न सकै फनीस सारदा।
निज प्रभुमय देखत जगत कासन करहिं बिरोध।
सब उदार सब पर-उपकारी; बिप्र-चरन-सेवक नर-नारी।
एक नारि-ब्रत-रत सब झारी; ते मन-बच-क्रम पति-हितकारी।
फूलहिं फरहिं सदा तरु कानन; रहहिं एक सँग गज-पंचानन।
खग मृग सहज बैर बिसराई; सबन्हि परसपर प्रीति बढ़ाई।
कूजहिं खग मृग नाना बृंदा; अभय चरहिं बन करहिं अनंदा।
सस-संपन्न सदा रह धरनी; त्रेता भइ सतजुग की करनी।
नित नव चरित देखि मुनि जाहीं; ब्रह्मलोक सब कथा सुनाहीं।
एहि बिधि चरित करत नित नए........इत्यादि।

(प्रश्न १०)

अब श्रीपार्वती जी दसवाँ प्रश्न करती हैं—

बहुरि कहहु करुनायतन कीन्ह जो अचरज राम;
प्रजा-सहित रघुबंस-मनि किमि गवने निज धाम?

इस प्रश्न का उत्तर उत्तरकांड में एक बार रघुनाथ बुलाये, गुरु द्विज पुरबासी सब आये से लेकर हरन-सकल-स्रम प्रभु स्रम पाई; गये जहाँ सीतल अमराई तक में गुप्त रूप से दिया गया है। गुप्त उत्तर इसलिये दिया है कि उपासकों की उपासना में अंत

न पड़े। क्योंकि सर्व-साधारण उपासकों का विश्वास है कि श्रीराम जी अब भी श्रीअयोध्या में विद्यमान हैं अथवा श्रीअयोध्या ही साकेतपुरी है। इसलिये गुप्त उत्तर दिया गया। यथा—

(उत्तर १०)

पुनि कृपालु पुर बाहर गए
गये जहाँ सीतल अमराई

इन वचनों के पश्चात् यह नहीं दिखाया गया कि पुर के बाहर शीतल आम्र-वनमें जाने के बाद फिर श्रीरामजी लौटे या नहीं लौटे, अथवा वहीं से अंतर्द्धान हो गए। यह बात गुप्त रक्खी और यहीं से इस प्रसंग को शेष कर दिया। अतएव इसी चौपाई से श्रीरामजी को निजधाम गए जानना चाहिए।

इसी प्रकार श्रीजानकीजी का गवन निम्न-लिखित चौपाई से जानो—

दुइ सुत सुंदर सीता जाये

और प्रजा-गवन निम्न-लिखित दोहे से जानो—

उमा अवधबासी नर-नारि कृतारथ रूप ;
ब्रह्म सच्चिदानंद घन रघुनायक जहँ भूप।

श्रीपार्वतीजी के प्रश्न का उत्तर इन चौपाइयों में हो गया और श्रीरामचंद्रजी महाराज ने आश्चर्य यह किया कि चराचर अवधवासी

जीवों को दिव्य स्वरूप देकर समस्त प्रजा-सहित अपने उस साकेतपुरी-धाम में चले गये जहाँ से आकर स्वायंभुव मनु और सतरूपा को वर दा[न] दिया था। अथवा श्रीराम-गवन में आश्चर्य यह हुआ कि अन्य अव[-]तारों में प्रजा-सहित सदेह निजधाम-गवन नहीं हुआ, किंतु श्रीरामज[ी का] आश्चर्य है कि अछत-तनु अर्थात् सदेह प्रजा-सहित अपने धाम गए। और भी कितने ही आश्चर्य हैं। यथा—

जो नहिं देखा नहिं सुना जो मनहू न समाय ;
सो सब अद्भुत देखेउँ बरनि कवन बिधि जाय। (उ०)
रघुभूखन के रूप ते गये अचरज परधाम ;
है अचरज यह अवध में धाम दूसरो नाम।
ले पर ते त्यागे तहाँ पर ते त्यागेउँ अंत ;
लही मैथिली अंत ना कंताश्चर्य करंत। (मा०म०)

अब दिखाते हैं कि श्रीअवध ही साकेतपुरी है। श्रीअयोध्यापु[री] और साकेतपुरी में नाम-मात्र अंतर है। दिव्य-रूप से साकेतपुरी और मायिक-रूप से अयोध्यापुरी। जैसे दोमहला कोठा, ऊपर त[ो] साकेतपुरी और नीचे अवधपुरी। यथा—

अवध में प्रभु प्रगट भये अवधहिं रहे समाय।

* * *

परमधाम श्रीअवध लसत जो सोइ साकेत कहावे ;

तहँ सियराम बिहार अनूपम भक्त जनन सो गावे ।

*　　*　　*

अवध में प्रभु प्रगट भये अवधहिं में भये लीन ;
इष्ट भाव के कारने गुप्त उतर कहि दीन ।

*　　*　　*

सीतल बन साकेत कहि गवनेउ अवध समेत ;
नारद मुनि तहँ आइकै अस्तुति करी सहेत । (मा० प्र०)

(प्रश्न ११)

श्रीपार्वतीजी फिर प्रश्न करती हैं—

पुनि प्रभु कहहु सो तत्त्व बखानी ; जेहि बिज्ञान मगन मुनि ज्ञानी

अर्थात् हे प्रभो ! अब उस तत्त्व का वर्णन कीजिए जिसमें विज्ञानी, मुनि और ज्ञानी लोग मग्न अर्थात् लीन रहते हैं ।

विज्ञानी—अनुभव-विचार में मग्न रहनेवाले । यथा शिवजी और लोमस ऋषि ।

ज्ञानी—देखहिं ब्रह्मरूप सब माहीं । यथा जनकजी ।

मुनि—मननशील अथवा सदसद्विवेकी । यथा सनकादिक ।

(उत्तर ११)

श्रीशिवजी महाराज उत्तर देते हैं—

ब्रह्म-ज्ञान-रत मुनि बिज्ञानी ; मोहिं परम अधिकारी जानी

लागे करन ब्रह्म-उपदेसा ; अज अद्वैत अगुन हृदयेसा
अकल अनीह अनाम अरूपा ; अनुभवगम्य अखंड अनूपा
मन-गोतीत अमल अबिनासी ; निर्बिकार निरवधि सुखरासी
सो तेइ ताहि तोहि नहिं भेदा ; बारि-बीचि इव गावहिं बेदा (उ०)

ज्ञान की जो सप्तभूमिका वर्णन हुई हैं वे

सुनहु तात यह अकथ कहानी ; समुझत बनै न जाइ बखानी

से आरंभ करके

सोहमस्मि इति वृत्ति अखंडा ; दीप-सिखा सोइ परम प्रचंडा
आतम-अनुभव-सुख सो प्रकासा ; तब भव-मूल भेद-भ्रम-नासा

तक में वर्णित हैं। स्वयं श्रीशिवजी महाराज भी राम-रूप में निमग्न हैं--

श्रीरघुनाथ-रूप उर आवा ; परमानंद अमित सुख पावा
मगन ध्यान रस दंड जुग (बा०)

और भी--

जेहि जाने जग जाइ हेराई ; जागे जथा सपन-भ्रम जाई
धरे नाम गुरु हृदय बिचारी ; बेद-तत्त्व * नृप तव सुत चारी
जोगिन परम तत्त्वमय भासा ; सांत सुद्ध सम सहज प्रकासा

* वेद का तत्त्व ओंकार प्रणव है जिस में बिंदु श्रीरामजी, मकार भरत जी, उकार लक्ष्मण जी और अकार शत्रुघ्नजी हैं, बिंदु का प्रतिबिंब मकार है, अकार उकार दोनों के अधार है।

पावा परम तत्त्व जनु जोगी; अमृत लहेउ जनु संतत रोगी (बा०)
राम-नाम सम तत्त्व न कोई; बेद बेदांत महँ देखा सोई
सब तत्त्वन में कियो बिचारा; परम तत्त्व सो नाम निकारा (वे०)
बिधि-हरि-हर-मय बेद-प्रानसो; अगुन अनूपम गुन-निधान सो
मूरति मधुर मनोहर देखी; भयउ बिदेह बिदेह बिसेखी
इन्हहिं बिलोकत अति अनुरागा; बरबस ब्रह्म-सुखहिं मन त्यागा
अगुन अखंड अनंत अनादी; जेहि चिंतहिं परमारथ-बादी
प्रभु जे मुनि परमारथ-बादी; कहहिं राम कहँ ब्रह्म अनादी
फिरत सनेह-मगन सुख अपने; नाम-प्रसाद सोच नहिं सपने
नाम जीह जपि जागहिं जोगी; बिरति बिरंचि-प्रपंच-बियोगी
ब्रह्म-सुखहिं अनुभवहिं अनूपा; अकथ अनामय नाम न रूपा (बा०)
एहि जग जामिनि जागहिं जोगी; परमारथी प्रपंच-बियोगी
राम-ब्रह्म परमारथ-रूपा; अबिगत अलख अनादि अनूपा (अ०)

निर्गुण ब्रह्म-तत्त्व जो ब्रह्मानंद है और सगुण ब्रह्म-तत्त्व जो परमानंद है, उसमें ज्ञानी विज्ञानी मुनि मग्न या लीन रहते हैं।—

तत्त्व प्रेम कर मम अरु तोरा; जानत प्रिया एक मन मोरा (सुं०)

किंतु सनकादिक-मुनि तो—

ब्रह्मानंद सदा लय लीना (उ०)

और लोमश-मुनि—

जद्यपि निरत ब्रह्म मुनि ज्ञानी ; ब्रह्म-ज्ञान-रत मुनि बिज्ञानी
जीवनमुक्त ब्रह्मपर चरित सुनहिं तजि ध्यान। (उ०) इत्यादि।

(प्रश्न १२)

अब श्रीपार्वतीजी फिर प्रश्न करती हैं—

भक्ति ज्ञान बिज्ञान बिरागा ; पुनि सब बरनहु सहित बिभागा (बा०)

इस प्रश्न के अंतर्गत ४ प्रश्न हैं। श्रीपार्वतीजी प्रार्थना करती हैं कि हे श्रीशिवजी महाराज ! (१) भक्ति, (२) ज्ञान, (३) विज्ञान और (४) वैराग्य का संयुक्त वर्णन कीजिए और फि विभाग-सहित अर्थात् पृथक्क्-पृथक्क् वर्णन कीजिए।

इस प्रश्न का उत्तर उत्तरकांड में ११५ दोहा से १३० दोह तक है, और प्रत्येक कांड के बीच-बीच में भी उत्तर है, यथ आरण्यकांड में श्रीराम-लक्ष्मण-संवाद १४ दोहा से १७ दोहा तक

(उत्तर १२)

पहले संयुक्त वर्णन दिखाया जाता है।—

अयोध्याकांड में श्रीलषणलालजी निषादराज से कहते हैं—

बोले लषन मधुर मृदु बानी ; ज्ञान-बिराग-भगति-रस-सान
काहु न कोउ सुख दुख कर दाता ; निज-कृत करम भोगु सब भ्रात
जोग-बियोग भोग भल-मंदा ; हित-अनहित मध्यम भ्रम-फं
जनमु-मरनु जहँलगि जग-जालू ; संपति-बिपति करमु अरु का

धरनि धाम धन पुर परिवारू; सरगु नरकु जहँ लगि व्यवहारू
देखिय सुनिय गुनिय मन माहीं; मोह-मूल परमारथ नाहीं
सपने होइ भिखारि नृप रंक नाकपति होइ;
जागे हानि न लाभ कछु तिमि प्रपंच जिय जोइ ।
अस बिचारि नहिं कीजिय रोसू; काहुहि बादि न देइय दोसू
मोह-निसा सब सोवनिहारा; देखिय सपन अनेक प्रकारा
एहि जग-जामिनि जागहिं जोगी; परमारथी प्रपंच-बियोगी
जानिय तबहिं जीव जग जागा; जब सब बिषय-बिलास बिरागा
होइ बिबेक मोह-भ्रम भागा; तब रघुनाथ-चरन अनुरागा
सखा परम परमारथ एहू; मन क्रम बचन राम-पद नेहू
राम ब्रह्म परमारथ-रूपा; अबिगत अलख अनादि अनूपा
सकल-बिकार-रहित गत-भेदा; कहि नित नेति निरूपहिं बेदा
भगत भूमि भूसुर सुरभि सुर-हित लागि कृपाल;
करत चरित धरि मनुज-तनु सुनत मिटहि जग-जाल।
सखा समुझि अस परिहरि मोहू; सिय-रघुबीर-चरन-रत होहू

पुनः आरण्यकांड में श्रीरामजी श्रीलषणलालजी से कहते हैं—

धर्म ते बिरति जोग तें ज्ञाना; ज्ञान मोच्छ-प्रद बेद-बखाना
जाते बेगि द्रवउँ मैं भाई; सो मम भगति भगत-सुखदाई
सो स्वतंत्र अवलंब न आना; तेहि आधीन ज्ञान-बिज्ञाना

भगति तात अनुपम सुख-मूला ; मिलइ जो संत होहिं अनुकूला
भगति कि साधन कहौं बखानी ; सुगम पंथ मोहिं पावहिं प्रानी
प्रथमहिं बिप्र-चरन अति प्रीती ; निज-निज कर्म-निरत स्रुति-रीती
यहिकर फल मन बिषय-बिरागा ; तब मम-धर्म उपज अनुरागा
स्रवनादिक नव भगति दृढ़ाहीं ; मम लीला रति अति मन माहीं
संत-चरन-पंकज अति प्रेमा ; मन क्रम बचन भजन दृढ़ नेमा
गुरु पितु मातु बंधु पति देवा ; सब मोहि कहँ जानैं दृढ़ सेवा
मम गुन गावत पुलक सरीरा ; गदगद गिरा नयन बह नीरा
काम आदि मद दंभ न जाके ; तात निरंतर बस मैं ताके

बचन कर्म मन मोरि गति भजन करहिं निहकाम ;
तिन्हके हृदय-कमल महँ करौं सदा बिस्राम ।

पुनः किष्किंधाकांड में श्रीरामजी श्रीलषणलालजीसे कहते हैं—

कहत अनुजसन कथा अनेका ; भगति बिरति नृपनीति बिबेका
बरषा-काल मेघ नभ छाये ; गरजत लागत परम सोहाये

लछिमन देखहु मोरगन नाचत बारिद पेखि ;
गृही बिरति-रत हरष जस बिस्नु-भगत कहँ देखि ।

घन घमंड नभ गरजत घोरा ; प्रिया-हीन डरपत मन मोरा
दामिनि दमक रह न घन माहीं ; खल कै प्रीति जथा थिर नाहीं
बरषहिं जलद भूमि नियराए ; जथा नवहिं बुध बिद्या पाए

बुंद-अघात सहहिं गिरि कैसे ; खल के बचन संत सह जैसे
छुद्र नदी भरि चली तोराई ; जस थोरेहु धन खल इतराई
भूमि परत भा ढाबर पानी ; जनु जीवहि माया लपटानी
समिटि समिटि जल भरहिं तलावा ; जिमि सदगुन सज्जन पहिं आवा
सरिता-जल जल-निधि महँ जाई ; होइ अचल जिमि जिव हरि पाई

हरित भूमि त्रिन-संकुल समुझि परहिं नहिं पंथ ;
जिमि पाषंड-बाद तें गुप्त होहिं सदग्रंथ ।

दादुर-धुनि चहुँदिसा सोहाई ; बेद पढहिं जनु बटु-समुदाई
नव पल्लव भए बिटप अनेका ; साधक मन जस मिले बिबेका
अर्क जवास पात बिनु भयऊ ; जस सुराज खल-उद्यम गयऊ
खोजत कतहुँ मिलइ नहिं धूरी ; करै क्रोध जिमि धरमहि दूरी
ससि-संपन्न सोह महि कैसी ; उपकारी कइ संपति जैसी
निसि तम घन खद्योत बिराजा ; जनु दंभिन्ह कर मिला समाजा
महाबृष्टि चलि फूटि कियारी ; जिमि स्वतंत्र भए बिगरहिं नारी
कृषी निरवहिं चतुर किसाना ; जिमि बुध तजहिं मोह मद माना
देखियत चक्रबाक खग नाहीं ; कलिहि पाइ जिमि धरम पराहीं
ऊसर बरषै तृन नहिं जामा ; जिमि हरिजन हिय उपज न कामा
बिबिध-जंतु-संकुल महि भ्राजा ; प्रजा बाढ़ जिमि पाइ सुराजा
जहँ तहँ रहे पथिक थकि नाना ; जिमि इंद्रियगन उपजे ज्ञाना

कबहुँ प्रबल बह मारुत जहँ तहँ मेघ बिलाहिं ;
जिमि कपूत के उपजे कुल सद्धर्म नसाहिं ।
कबहुँ दिवस महँ निबिड तम कबहुँक प्रगट पतंग ;
बिनसइ उपजइ ज्ञान जिमि पाइ कुसंग सुसंग ।

बरषा-बिगत सरद-रितु आई ; लछिमन देखहु परम सोह
फूले कास सकल महि छाई ; जनु बरषा-कृत प्रगट बुढ़
उदित अगस्ति पंथ-जल सोषा ; जिमि लोभहि सोषइ संतो
सरिता सर निर्मल जल सोहा ; संत-हृदय जस गत-मद-मो
रस-रस सूख सरित सर पानी ; ममता त्याग करहिं जिमि ज्ञा
जानि सरद-रितु खंजन आए ; पाइ समय जिमि सुकृत सोह
पंक न रेनु सोह असि धरनी ; नीति-निपुन नृप कै जसि क
जल-संकोच बिकल भइ मीना ; अबुध कुटुंबी जिमि धन-ही
बिनु घन निर्मल सोह अकासा ; हरिजन इव परिहर सब आ
कहुँ कहुँ बृष्टि सारदी थोरी ; कोउ एक पाव भगति जिमि

चले हरषि तजि नगर नृप तापस बनिक भिखारि ;
जिमि हरि-भगति पाइ स्रम तजहिं आस्रमी चारि ।

सुखी मीन जे नीर अगाधा ; जिमि हरि-सरन न एकौ
फूले कमल सोह सर कैसा ; निर्गुन ब्रह्म सगुन भए
गुंजत मधुकर मुखर अनूपा ; सुंदर खग-रव नाना

चक्रवाक-मन दुख निसि पेखी ; जिमि दुर्जन परसंपति देखी
चातक रटत तृषा अति ओही ; जिमि सुख लहइ न संकर-द्रोही
सरदातप निसि-ससि अपहरई ; संत-दरस जिमि पातक टरई
देखि इंदु चकोर-समुदाई ; चितवहिं जिमि हरि-जन हरि पाई
मसक दंस बीते हिम-त्रासा ; जिमि द्विज-द्रोह किए कुल-नासा
भूमि जीव संकुल रहे गए सरद-रितु पाइ ;
सदगुरु मिले जाहिं जिमि संसय-भ्रम-समुदाइ ।

और बालकांड में ४४ वाँ दोहा इस प्रकार है—

ब्रह्म-निरूपन धरम-बिधि बरनहिं तत्त्व-बिभाग ;
कहहिं भक्ति भगवंत कै संयुत ज्ञान-बिराग ।

इसका अर्थ इस प्रकार है—

'ब्रह्म-निरूपन' अर्थात् वेदांत-शास्त्र का विचार ।

'धरम-बिधि' अर्थात् मीमांसा-शास्त्र तथा धर्म-शास्त्रादि का विचार ।

'तत्त्व-बिभाग' अर्थात् सांख्य-योग-शास्त्र आदि का विचार ।

'ज्ञान-बिराग-संयुत भगवद्भक्ति' अर्थात् शांडिल्य-सूत्र, नारद-पंचरात्र तथा श्रीमद्भागवत आदि का विचार ।

अब विभाग-सहित अर्थात् पृथक्-पृथक् वर्णन करते हैं—

(१) भक्ति किसको कहते हैं ?

उत्तर—मन, वचन, कर्म से भगवत् में प्रेम होने को भक्ति कहते हैं। भक्ति के तीन स्थूल भेद हैं—

१—नवधा,

२—प्रेमा और

३—परा।

'वेदांत-सार'-ग्रंथ में भक्ति के विषय में कहा है—

श्रवणादिक नव साधने प्रेम-परा-फल मान ;
भक्ति भजन कौ कहत हैं और सुसेवा जान।

इसमें श्रवणादिक नवधा-भक्ति को प्रेमा और परा-भक्ति का साधन कहा है। नवधा-भक्ति करने से प्रेमा-भक्ति उत्पन्न होती है और प्रेमा-भक्ति से परा-भक्ति होती है, जो भक्ति का अंतिम स्वरूप है। नवधा-भक्ति को, आरण्यकांड में, श्रीरामजी शबरी से कहते हैं—

नवधा भगति कहौं तोहि पाहीं ; सावधान सुनु धरु मन माहीं।
प्रथम भगति संतन्ह कर संगा ; दूसर रति मम कथा-प्रसंगा।

गुरु-पद-पंकज-सेवा तीसर भगति अमान ;
चौथ भगति मम गुनगन करइ कपट तजि गान।

मंत्र-जाप मम दृढ़ बिस्वासा ; पंचम भजन सो बेद प्रकासा।
छठ दम सील बिरति बहु कर्मा ; निरत निरंतर सज्जन धर्मा।
सातव सम मोहिमय जग देखा ; मो तें संत अधिक करि लेखा।

आठव जथा-लाभ संतोषा ; सपनेहु नहिं देखहि पर-दोषा
नवम सरल सब सन छल-हीना ; मम भरोस हिय हरष न दीना
नव महँ एकउ जिन्हके होई ; नारि पुरुष सचराचर कोई
सोइ अतिसय प्रिय भामिनि मोरे ; सकल प्रकार भगति दृढ़ तोरे

नवधा-भक्ति का वर्णन श्रीमद्भागवत में इस प्रकार हुआ है—

श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनं ;
अर्चनं वंदनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम् ।

प्रेमा-भक्ति का लक्षण यह है—

प्रेम-बिबस तनु-दसा भुलानी
प्रेम-बिबस तनु-सुधि कछु नाहीं (आ०)

हर-हिय राम-चरित सब आए ; प्रेम पुलक लोचन जल छाए (बा०)
मम गुन गावत पुलक सरीरा ; गदगद गिरा नयन बह नीरा(आ०)

प्रेम-बिबस सीता पहँ आई (बा०)

परा-भक्ति का लक्षण यह है—

परा-भक्ति-फल-रूप है मन ते हरि को ध्यान ;
अष्ट पहर बिसरे नहीं परा-भक्ति सो जान । (वे०)
को हम कहाँ बिसरि तन गए (आ०)

देखि भानु-कुल-भूषनहिं बिसरा सखिन्ह अपान (बा०)
निर्भर प्रेम-मगन मुनि ज्ञानी ; कहि न जाइ सो दसा भवानी

दिसि अरु बिदिसि पंथ नहिं सूझा (आ०)
अगम सनेह भरत-रघुबर को ; जहँ न जाइ मन बिधि-हरि-हर को
परम-प्रेम-पूरन दोउ भाई ; मन-बुधि-चित-अहमिति बिसराई
अरथ न धरम न काम-रुचि गति न चहउँ निरबान ;
जनम जनम रति राम-पद यहु बरदान न आन ।
जाहि न चाहिय कबहुँ कछु तुम सन सहज सनेह ;
बसहु निरंतर तासु उर सो राउर निज गेह । (अ०)
सकल-कामना-हीन जे राम-भगति-रस-लीन ;
नाम-सुप्रेम-पियूष-ह्रद तिनहु किए मन मीन । (बा०)
मन ते सकल बासना भागी ; केवल राम-चरन लयलागी (उ०)

नवधा-भक्ति के निरूपण में शबरी-प्रति राम-वचन उद्धृत कि गए, प्रेमा-भक्ति के निरूपण में सुतीक्ष्ण-मुनि और सखियों की द दिखाई गई और परा-भक्ति के उदाहरण में भरतजी और का भुशुंडि का उल्लेख किया गया । अब ज्ञान का वर्णन करते हैं ।-

(२) ज्ञान किसको कहते हैं और ज्ञान के क्या लक्षण हैं ?

उत्तर—सत्य और असत्य का पूर्ण विवेक होना ज्ञान है ।

ज्ञान के चार भेद हैं—

१—वस्तु-ज्ञान,

२—शास्त्र-ज्ञान,

३—निजात्म-ज्ञान और

४—परमात्म-ज्ञान।

वस्तु-ज्ञान, यथा—

बस्तु अनेक करिय किमि लेखा; कहि न जाय जानहिं जिन देखा (बा०)

बस्तु गथ बिनु पाइए (उ०)

बिबिध प्रसंग अनूप बखाने

बिबिध बस्तु को बरनै पारा (बा०)

शास्त्र-ज्ञान, यथा—

सास्त्र सुचिंतित पुनि-पुनि देखिय (आ०)

निजात्म-ज्ञान, यथा—

उपजा ज्ञान बचन तब बोला; नाथ-कृपा मन भयउ अलोला
सुख संपति परिवार बड़ाई; सब परिहरि करिहौं सेवकाई
ए सब राम-भगति के बाधक; कहहिं संत तव पद-अवराधक (कि०)
ज्ञान मान जहँ एकौ नाहीं; देखइ ब्रह्मरूप सब माहीं (आ०)

परमात्म-ज्ञान, यथा—

जेहि जाने जग जाइ हेराई; जागे जथा स्वप्न-भ्रम जाई (बा०)

ज्ञान प्राप्त होने के उपाय क्या हैं ?

उत्तर—गुरु-उदेश, शास्त्र-चिंतन, सत्संग और वैराग्य द्वारा सर्व देश काल वस्तु का प्रत्यक्ष अनुभव करने से ज्ञान प्राप्त होता है। यथा—

बिनु गुरु होइ कि ज्ञान, ज्ञान कि होइ बिराग बिनु। (उ०)
होइ न बिमल बिबेक उर गुरुसन किये दुराव।
बिनु सतसंग बिबेक न होई; राम-कृपा बिनु सुलभ न सोई (बा०)

ज्ञानवान् पुरुष के लक्षण क्या हैं? उत्तर—

जानै तीन काल निज ज्ञाना; करतलगत आमलक समाना(बा०)
तुम त्रिकालदरसी मुनिनाथा; बिस्व बदर जिमि तुम्हरे हाथा
जासु ज्ञानरबि भवनिसिनासा; बचन किरन मुनि-कमल बिकासा
भरत हृदय सियराम-निवासू; तहँकि तिमिर जहँ तरनि-प्रकासू
इहाँ मोहकर कारन नाहीं; रबि-सम्मुख तम कबहुँ कि जाहीं
गुरु बिबेक-सागर जग जाना; जिनहिं बिस्व करबदर-समाना(अ०)
भए प्रकास कतहुँ तम नाहीं; ज्ञान-उदय जिमि संसय जाहीं
ज्ञान-दृष्टि बल मोहिं अधिकाई; (लं०)

अक्रोधता बिरागजुत जितइंद्री छमवंत;
दया सर्वजन को हितो निर्लोभता भनंत।
दाता पूरन भय-रहित सोक न व्यापै एक;
यह दस लच्छन ज्ञान के भाखै सहित बिबेक। (ग्रंथांतर)

(२) विज्ञान किसको कहते हैं?

उत्तर—जीव और ब्रह्म की एकता का नाम विज्ञान है। यथा

जोग-अग्नि करि प्रगट तब करम सुभासुभ लाइ;

बुद्धि सिरावै ज्ञान-घृत ममता-मल जरि जाइ।
तब बिज्ञान-निरूपिनी बुद्धि बिसद घृत पाइ;
चित्त-दिया भरि धरै दृढ़ समता दियटि बनाइ।
तीन अवस्था तीन गुन तेहि कपास ते काढि;
तूल तुरीय सवारि पुनि बाती करै सुगाढि।
एहि बिधि लेसै दीप, तेज-रासि बिज्ञान-मय;
जातहि जासु समीप, जरहिं,मदादिक सलभ सब। (उ०)

अब विज्ञानी का लक्षण कहते हैं—

संकर सहज सरूप सँभारा; लागि समाधि अखंड अपारा
सुमिरतहरिहिस्रापगति बाँधी;सहजबिमलमनलागिसमाधी (बा०)
तिन्ह सहस्त्र महँ सब-सुख-खानी; दुर्लभ ब्रह्म-लीन बिज्ञानी
बिनु बिज्ञान कि समता आवे; (उ०)
ब्रह्म जीव इव सहज सँघाती; (बा०)

(४) विराग किसको कहते हैं ?

उत्तर——विषय-वासना से रहित होकर श्रीराम-परमात्मा में प्रेम होने को विराग कहते हैं। विगतो रागः विरागः। यथा—

कहिय तात सो परम बिरागी; तृनसम सिद्धि तीनगुनत्यागी (आ०)
तेहि पुर बसत भरत बिनु रागा; चंचरीक जिमि चंपक-बागा
जानइ तबहिं जीव जग जागा; जब सब बिषय-बिलास-बिरागा

राम-चरन-पंकज प्रिय जिनहीं ; बिषय-भोग बस करै कि तिनहीं
कबिअलखितगति भेखबिरागी;मन क्रम बचन रामअनुरागी (अ०)
ब्रह्मलोक लै भोग जो करहिं सबहिं को त्याग ;
बेद-अर्थ-ज्ञाता कहै ताहि कहिय बैराग।

विराग कैसे होता है ? सुनिए—

नामजीहज़पि जागहिं जोगी; बिरति बिरंचि-प्रपंच-बियोगी (बा०)
राम नाम सों बिराग जोग जगतु है (बिनय०)
सुमिरत रामहिं तजहिं जन तृन-सम बिषय-बिलास। (अ०)
—इत्यादि।

(प्रश्न १३)

श्रीपार्वतीजी पुनः प्रश्न करती हैं—

औरउ राम-रहस्य अनेका ; कहहु नाथ अति बिमल बिबेका

हे नाथ ! श्रीरामजी के और भी जो अनेक रहस्य अर्थात् गुप्त चरित हैं, उनको अति विमल विवेक से कहिए अथवा हे नाथ आपका विवेक अर्थात् विचार अति विमल है, सो और भी जो अनेक राम-रहस्य हैं, उन्हें कहिए।

इस प्रश्न का उत्तर श्रीरामायण के सातोंकांड में है, सो संक्षेप में वर्णन करते हैं।

रहस्य गुप्त लीलाओं को कहते हैं। उन्हें जीव तभी जान

सकता है, जब श्रीरामजी जनावें। श्रीरामजी का स्वभाव, उनकी कृपा, करुणा, दया, उदारता, सदा प्रसन्नता, एकरसता आदि को जान लेना ही राम-रहस्य का जानना है। सो दिखाते हैं—

(उत्तर १३)

कौतुक देखि पतंग भुलाना ; एक मास तेहि जात न जाना

मास-दिवस कर दिवस भा मर्म न जानै कोइ ;
रथ-समेत रबि थाकेउ निसा कवन बिधि होइ।

यह रहस्य काहू नहिं जाना ; दिनमनि चलेउ करत गुन गाना

दिखरावा मातहि निज अद्भुत रूप अखंड ;
रोम रोम प्रति लागे कोटि कोटि ब्रह्मंड।

हरि जननी बहु बिधि समुझाई ; यह जनि कतहुँ कहेसि सुनु माई

जिनके रही भावना जैसी ; प्रभु-मूरति देखी तिन तैसी

एहि बिधि रहा जाहि जस भाऊ; तेहि तस देखेउ कोसलराऊ

राजत राज-समाज महँ कोसल-राजकिसोर ;
सुंदर स्यामल गौर तन बिस्व-बिलोचन-चोर।

नारि बिलोकहिं हर्षि हिय निज निज रुचि अनुरूप ;
जनु सोहत सृंगार धरि मूरति परम अनूप।

निज निज रुचि रामहिं सब देखा ; कोउ न जान कछु मर्म बिसेखा

लेत चढ़ावत खैंचत गाढ़े ; काहु न लखा देख सब ठाढ़े

पुरजन परिजन जातिजन जाचक मंत्री मीत ;
मिले जथाबिधि सबहिं प्रभु परम कृपाल बिनीत ।

मुनि हित कारन कृपानिधाना ; दीन्ह कुरूप न जाइ बखाना
सो चरित्र लखि काहु न पावा ; नारद जानि सबहिं सिर नावा
काहु न लखा सो चरित बिसेखी ; सो सरूप नृपकन्या देखी (बा०)
आरत लोग राम सब जाना ; करुनाकर सुजान भगवाना
जो जेहि भाय रहा अभिलाखी ; तेहि तेहि कै तसि तसि रुचि राखी
सानुज मिलि पल महँ सब काहू ; कीन्ह दूर दुख दारुन दाहू
यह बड़ि बात राम कै नाहीं ; जिमि घट कोटि एक रबि छांहीं (अ०)
एक बार चुनि कुसुम सोहाये ; निज कर भूषन राम बनाये

कीन्ह मोह बस द्रोह, जद्यपि तेहि कर बध उचित ;
प्रभु छाँड़ेउ करि छोह, को कृपालु रघुबीर सम ।
मुनि समूह महँ बैठ प्रभु सम्मुख सब की ओर ;
सरद इंदु तन चितवत मानहु निकर चकोर ।
सुर मुनि सभय प्रभु देखि मायानाथ अति कौतुक करेउ ;
देखहिं परसपर राम करि संग्राम रिपुदल लरि मरेउ ।

यहाँ राम जस जुक्ति बनाई ; सुनहु उमा सो कथा सोहाई
लछमन हू यह मरम न जाना ; जो कछु चरित रचा भगवाना (आ०)
बानर-कटक उमा मैं देखा ; सो मूरख जो किय चह लेखा

आइ राम-पद नावहिं माथा ; निरखि बदन सब होहिं सनाथा
अस कपि एक न सेना माहीं ; राम कुसल जेहि पूछा नाहीं
यह कछु नहिं प्रभु की अधिकाई ; बिस्वरूप ब्यापक रघुराई (कि०)

छत्र मुकुट ताटंक सब हते एकही बान ;
सबके देखत महि परे मर्म न कोऊ जान ।
अस कौतुक करि राम-सर प्रबिसे आइ निषंग ;
रावन-सभा ससंक सब देखि महा रस-भंग ।

सीता प्रथम अनल महँ राखी ; प्रगट कीन्ह चह अंतर साखी

प्रतिबिंब अरु लौकिक कलंक प्रचंड पावक महँ जरे ;
प्रभु-चरित काहु न लखे नभ-सुर सिद्ध मुनि देखत खरे ।

शंका—प्रतिज्ञा छाया को कहते हैं । यदि उसको जलने के अर्थ में कहा जाय, तो पतिव्रत-धर्म कैसे बन सकता है ? और प्रतिबिंब तथा लौकिक-कलंक का पावक में जलना असंभव भी प्रतीत होता है ।

उत्तर—सत्य सीता को प्रकट करने का तात्पर्य है । 'मानस' में जो 'जरे' शब्द है, वह भस्म होने के अर्थ में नहीं है । मतलब यह है कि प्रतिबिंब प्रतिबिंब में लय हो गया, लौकिक-कलंक लौकिक-कलंक में मिल गया और पावक पावक में लीन हो गया । जिस प्रकार अँगूठी में नग जड़ दिए जाने से दोनों का एकरूप हो जाता है, उसी प्रकार 'जरे' अर्थात् एकरूप हो गए ।

प्रेमातुर सब लोग निहारी ; कौतुक कीन्ह कृपालु खरारी
अमित रूप प्रगटे तेहि काला ; जथाजोग मिलि सबहिं कृपाला
कृपा-दृष्टि रघुबीर बिलोकी ; किए सकल नर-नारि बिसोकी
छन महँ सबहिं मिले भगवाना ; उमा मर्म यह काहु न जाना
ताते नहिं कछु तुमहिं दुरावों ; परम रहस्य मनोहर गावों
तेहि कौतुक कर मर्म न काहू ; जाना अनुज न मातु पिताहू
उभय घरी महँ मैं सब देखा ;

यह रहस्य रघुनाथ कर बेगि न जानै कोय ;
जाने ते रघुपति-कृपा सपनेहु मोह न होय। (उ० ११६)

राम-रहस्य ललित बिधि नाना ; गुप्त प्रगट इतिहास पुराना
भक्ति ज्ञान बिज्ञान बिरागा ; जोग चरित्र रहस्य बिभागा (उ०)
तव प्रसाद मम मोह नसाना ; राम-रहस्य अनूपम जाना
सो जानै जेहि देहु जनाई ; (अ०)

इत्यादि सब राम-रहस्य हैं।

(प्रश्न १४)

श्रीपार्वतीजी फिर प्रश्न करती हैं—

जो प्रभु मैं पूछा नहिं होई ; सो दयालु राखहु जनि गोई
जदपि जोषिता अन-अधिकारी ; दासी मन क्रम बचन तुम्हारी
गूढ़हु तत्त्व न साधु दुरावहिं ; आरत अधिकारी जहँ पावहिं

अति आरत पूछउँ सुरराया; रघुपति-कथा कहहु करि दाया

रामचरित-मानस में जहाँ-जहाँ लुप्त-प्रश्नोत्तर हैं, सो सब इस प्रश्न के उत्तर जानिए। फिर भी श्रीशिवजी महाराज कहते हैं—

(उत्तर १४)

औरउ एक कहौं निज चोरी; सुनु गिरिजा अति दृढ़ मति तोरी
उमा कहौं मैं अनुभव अपना; सत हरि-भजन, जगत सब सपना
कागभुसुंडि संग हम दोऊ; मनुज-रूप जानै नहिं कोऊ
परमानंद प्रेम-सुख फूले; बीथिन्ह फिरहिं मगन मन भूले
यह शुभ चरित जान पै सोई; कृपा राम कै जापर होई (बा०)
मति-अनुरूप कथा मैं भाखी; जद्यपि प्रथम गुप्त करि राखी
तव मन प्रीति देखि अधिकाई; तब मैं रघुपति-कथा सुनाई

औरउ एक गुप्त मत सबहिं कहउँ कर जोरि;
शंकर-भजन बिना नर भक्ति न पावै मोरि। (उ०)

—इत्यादि

हम पहले कह आए हैं कि श्रीपार्वतीजी ने १४ प्रश्न कैलाश-प्रकरण में किए हैं और ६ प्रश्न उत्तरकांड में। सो श्रीपार्वतीजी के १४ प्रश्नों का उत्तर हो गया। श्रीपार्वतीजी के ये १४ प्रश्न बाल-कांड में हैं और इनका उत्तर बालकांड में राम ब्रह्म व्यापक जग जाना; परमानंद परेस पुराना से आरंभ करके सातों कांडों में

विस्तार-पूर्वक वर्णन करते हुए उत्तरकांड में हरन सकल स्रम प्रभु स्रम पाई; गए जहाँ सीतल अमराई तक दिया गया है। अब उत्तरकांड में श्रीपार्वतीजी के जो ६ प्रश्न और श्रीगरुड़जी के जो १३ प्रश्न हैं, उनका उत्तर दिया जायगा।

उत्तरकांड में श्रीपार्वतीजी के जो ६ प्रश्न हैं, उनमें ४ प्रश्न वही हैं जो श्रीगरुड़जी के १३ प्रश्नों के अंतर्गत आए हैं, इसलिये श्रीगरुड़जी के ४ प्रश्नों का उत्तर भी श्रीपार्वतीजी के प्रश्नों के साथ दिया जाता है—

श्रीपार्वतीजी प्रश्न करती हैं—

(प्रश्न १५)

(गरुड़-प्रश्न १)

सब से सो दुर्लभ सुरराया ; राम-भगति-रत गत मद-माया।
सो हरि-भगति काग किमि पाई ; बिस्वनाथ मोहिं कहहु बुझाई।

शब्दांतर में यही प्रश्न श्रीगरुड़जी भी करते हैं—

ज्ञान-बिरति-बिज्ञान-निवासा ; रघुनायक के तुम प्रिय दासा।

(उत्तर १५)

उत्तर में श्रीकागभुशुंडिजी का कथन है कि श्रीशिवजी की कृपा, लोमश-मुनि के आशीर्वाद और श्रीरामजी के वर से मुझे हरि-भक्ति मिली। यथा—

पुरी-प्रभाव अनुग्रह मोरे ; राम-भगति उपजहि उर तोरे (शिव)

*　　*　　*

राम-भगति अबिरल उर तोरे ; बसहु सदा प्रसाद अबमोरे (लोमश)

*　　*　　*

भगत-कल्पतरु प्रनत-हित कृपा-सिंधु सुख-धाम ;
सोइ निज भगति मोहिं प्रभु देहु दया करि राम।

यह वरदान माँगने पर श्रीरामचंद्रजी ने 'एवमस्तु' कहा। यथा—

एवमस्तु कहि रघुकुलनायक ;
सब सुभ गुन बसिहहिं उर तोरे ;

भगति ज्ञान बिज्ञान बिरागा ; जोग चरित्र रहस्य बिभागा
जानब तैं सबही कर भेदा ; मम प्रसाद नहिं साधन खेदा
—इति।

(प्रश्न १६)

(गरुड़-प्रश्न २)

श्रीपार्वतीजी पूछती हैं—

राम-परायन ज्ञान-रत गुनागार मति-धीर ;
नाथ कहहु केहि कारन पायउ काग-सरीर।

श्रीगरुड़जी महाराज भी पूछते हैं—

कारन कवन देह यह पाई ; तात सकल मोहिं कहहु बुझाई

(उत्तर १६)

जब श्रीकागभुशुंडिजी ब्राह्मण-शरीर में थे, तो एक बार उत्तराखंड में, सुमेरु-पर्वत के समीप, श्रीलोमश-मुनि के आश्रम में गए और उनसे ईश्वर-संबंध में प्रश्न किया। श्रीलोमश-मुनि ने उनके सामने नाना युक्ति-प्रमाणों से ब्रह्म-निरूपण किया और जीव-ईश्वर की अभेदता दिखाई, किंतु श्रीकागभुशुंडिजी की समझ में वह बात न आई और वह उनसे सगुण-ब्रह्म-विषयक जिज्ञासा करते रहे। इस पर क्रोधित होकर लोमश-मुनि ने उनको शाप दिया जिससे उनको काग-तन धारण करना पड़ा। यथा—

सठ सपक्ष तव हृदय बिसाला ; सपदि होहु पक्षी चंडाला

तुरत भयउँ मैं काग तब पुनि मुनि-पद सिर-नाइ ;
सुमिरि राम रघुबंस-मनि हर्षित चलेउँ उड़ाइ ।

कथा सकल मैं तुमहिं सुनाई ; काग-देह जेहि कारण पाई

(प्रश्न १७)

(गरुड़-प्रश्न २)

श्रीपार्वती फिर प्रश्न करती हैं—

यह प्रभु-चरित पवित्र सुहावा ; कहहु कृपालु काग कहँ पावा

श्रीगरुड़-प्रश्न—

रामचरित यह सुंदर स्वामी ; पायउ कहाँ कहहु नभ-गामी

(उत्तर १७)

मोहिं मुनि कछुक काल तहँ राखा ; राम-चरित-मानस सब भाखा (उ०)

अर्थात् सातोंकांड (बालकांड में सुनु सुभ कथा भवानि से लेकर उत्तरकांड में हरि-चरित्र-मानस तुम गावा तक और किसी किसी के मत से तव प्रसाद बिस्वेस तक) की कथा सुनाई।

राम-चरित-सर गुप्त सुहावा ; संभु-प्रसाद तात मैं पावा

भुशुंडि ने लोमश-मुनि से पाया और लोमश-मुनि ने कहा कि मैंने शिवजी से पाया। यह जानकर श्रीभुशुंडिजी को श्रीशिवजी से रामचरित सुनने की इच्छा हुई। यथा—

दीन्हे संभु भुसुंडि को ताते सुनेउ अनंत ;
गुनै संत यह तत्त्व को उमहि सुनायो अंत।
मुनि लोमस गुरु ते बहुरि सिव सद्गुन ढिग जाइ ;
लहेसि बिधि सद्ग्रंथ तब यह मति लखे लखाइ।
उमहि सुनायो सबिधि हर प्रश्नोत्तर जस नीर ;
कहे सिवा प्रति प्रस्न बिनु भई मम मानस भीर। (मा०म०)

प्रथम श्रीशिवजी ने यह चरित्र दक्ष-कन्या श्रीसतीजी को सुनाया और श्रीशिवजी के आशीर्वाद से लोमश-मुनि द्वारा भुशुंडि को प्राप्त हुआ, तब फिर श्रीभुशुंडिजी श्रीशिवजी के पास आए।

सो सिव कागभुसुंडिहि दीन्हा ; राम-भगति-अधिकारी चीन्हा

मानस के परंपरा से श्रीशिवजी आचार्य हैं। यथा—

रचि महेस निज मानस राखा

श्रीशिवजी ने किसी काल में शूद्र-तन-धारी भुशुंडि को आशीर्वाद दिया था—

पुरी-प्रभाव अनुग्रह मोरे; रामभगति उपजहि उर तोरे

इसी कारण वह रामचरित लोमश-मुनि द्वारा भुशुंडि को मिला, अतएव श्रीशिवजी का भुशुंडि को देना सिद्ध हुआ।

अथवा कल्पभेद करके श्रीशिवजी ने प्रथम दक्ष-सुता श्रीसतीजी को सुनाया और फिर कागभुशुंडि को। जब सतीजी ने तन-त्याग किया, तब श्रीशिवजी ने मराल-तन धारण करके श्रीभुशुंडिजी से सुना। कालांतर में जब सतीजी गिरिजा हुईं, तो श्रीशिवजी ने फिर उन्हें वह चरित्र सुनाया। अतएव, शिवजी परंपरा कहते हैं कि जो **भुशुंडि खगपतिहि सुनाई,** वही कथा, हे भवानी, सुनो।

१५, १६ और १७ नंबर के प्रश्नों के उत्तर उत्तरकांड में ६४ दोहा में **गरुड़-गिरा सुनि हर्षेउ कागा; बोलेउ उमा सहित अनुरागा** से लेकर ११४ दोहा में **कथा सकल मैं तुमहिं सुनाई; काग-देह जेहि कारन पाई** तक में वर्णित है।

(प्रश्न १८)

श्रीपार्वतीजी श्रीशिवजी से प्रश्न करती हैं—

तुम केहि भाँति सुना मदनारी ; कहहु मोहिं अति कौतुक भारी

इस प्रश्न का उत्तर उत्तरकांड में ५५ वें दोहे में "मैं जिमि कथा सुनी भवमोचनि ; सो प्रसंग सुनु सुमुखि सुलोचनि" से आरंभ करके ९७ वें दोहे में "गिरिजा कहेउँ सो सब इतिहासा ; मैं जेहि समय गयउँ खग पासा" तक वर्णित है । सो संक्षेप में दिखाते हैं—

(उत्तर १८)

प्रथम दच्छ-गृह तव अवतारा ; सती नाम तब रहा तुम्हारा
दच्छ-जज्ञ तव भा अपमाना ; तुम्ह अति क्रोध तजे तब प्राना
तब अति सोच भयउ मन मोरे ; दुखी भयउँ बियोग प्रिय तोरे
सुंदर बन गिरि सरित तड़ागा ; कौतुक देखत फिरेउँ बिरागा
गिरि सुमेरु उत्तर दिसि दूरी ; नील सैल इक सुंदर भूरी
तेहि गिरि रुचिर बसइ खग सोई ; तासु नास कलपांत न होई
बट तर कह हरि-कथा-प्रसंगा ; आवहिं सुनहिं अनेक बिहंगा
जब मैं जाइ सो कौतुक देखा ; उर उपजा आनंद बिसेखा

तब कछु काल मराल-तनु धरि तहँ कीन्ह निवास ;
सादर सुनि रघुपति-गुन पुनि आयउँ कैलास ।

(प्रश्न १९)

श्रीपार्वतीजी प्रश्न करती हैं—

गरुड़ महाज्ञानी गुन-रासी ; हरि-सेवक अति निकट निवासी

तेहि केहि हेतु कागसन जाई ; सुनी कथा मुनिनिकर बिहाई (उ०)

(उत्तर १९)

श्रीपार्वतीजी के इस प्रश्न का उत्तर श्रीमहादेवजी ने उत्तरकांड में "अब सो कथा सुनहु जेहि हेतू ; गयउ काग पहिं खग-कुल-केतू" से लेकर "सुनहु तात जेहि कारज आयउँ ; सो सब भयउ दरस तव पायउँ" (उत्तरकांड दोहा ५७ से ६३ तक) दिया है। उसके प्रमाण में और भी वाक्य दिए जाते हैं। यथा—

जब रघुनाथ कीन्ह रन-क्रीड़ा ; समुझत चरित होत मोहिं ब्रीड़ा
इंद्रजीत-कर आप बँधायो ; तब नारद मुनि गरुड़ पठायो
बंधन काटि गयउ उरगादा ; उपजा हृदय प्रचंड बिषादा
ब्यापक ब्रह्म बिरज बागीसा ; माया-मोह-पार परमीसा
सो अवतार सुनेउँ जग माहीं ; देखेउँ सो प्रभाव कछु नाहीं

भव-बंधन तें छूटहिं नर जपि जाकर नाम ;
खर्ब निसाचर बाँधेउ नाग-पास सोइ राम।

ब्याकुल गयउ देवऋषि पाहीं ; कहेसि जो संसय निज मन माहीं
जेहि बहु बार नचावा मोहीं ; सोइ ब्यापी बिहंगपति तोहीं
चतुरानन पहिं जाहु खगेसा ; सोइ करहु जेहि होइ निदेसा
तब खगपति बिरंचि पहिं गयऊ ; निज संदेह सुनावत भयऊ
बैनतेय संकर पहिं जाहू ; तात अनत पूछहु जनि काहू

परमातुर बिहंगपति आयउ तब मो पास ;
जात रहेउँ कुबेर-गृह रहिहु उमा कैलास ।

मिलेहु गरुड़ मारग महँ मोही ; कवन भाँति समझावउँ तोही
जाइहि सुनत सकल संदेहा ; राम-चरन होइहहि अति नेहा
उत्तर दिसि सुंदर गिरि नीला ; तहँ रह कागभुसुंडि सुसीला
मैं जब तेहि सब कहा बुझाई ; चलेउ हरषि मम पद सिरनाई
गयउ गरुड़ जहँ बसइ भुसुंडी ; मति अकुंठ हरि-भगति अखंडी
देखि सैल प्रसन्न मन भयऊ ; माया मोह सोच सब गयऊ
कथा अरंभ करइ सोइ चाहा ; तेही समय गयउ खगनाहा
करि पूजा समेत अनुरागा ; मधुर बचन तब बोलेउ कागा

नाथ कृतारथ भयउँ मैं तव दरसन खगराज ;
आयसु देहु सो करहुँ अब प्रभु आयउ केहि काज ।
सदा कृतारथ-रूप तुम्ह कह मृदु बचन खगेस ;
जेहि कै अस्तुति सादर निज मुख कीन्ह महेस ।

यहाँ तक श्रीपार्वतीजी के उन्नीसवें प्रश्न "गरुड़ महाज्ञानी गुन-रासी ; हरि-सेवक अति निकट-निवासी । तेहि केहि हेतु काग सन जाई ; सुनी कथा मुनि-निकर बिहाई" का उत्तर दिया गया । अब श्रीपार्वतीजी बीसवाँ प्रश्न करती हैं ।

(प्रश्न २०)

श्रीपार्वतीजी ने प्रश्न किया—

कहहु कवन बिधि भा संबादा; दोउ हरि-भक्त काग उरगादा

यह प्रश्न श्रीशिवजी से कल्पांतर्गत है। अर्थात् श्रीपार्वतीजी ने श्रीमहादेवजी से यह प्रश्न किसी अन्य कल्प में किया था, इस कारण यह कल्पांतर्गत कहा गया। और बालकांड में श्रीमहादेवजी ने श्रीपार्वतीजी से कहा था, "सो संबाद उदार जेहि बिधि भा आगे कहब।" वही संवाद उत्तरकांड में "अब श्रीराम-कथा अति पावनि; सदा सुखद दुख-पुंज नसावनि" से लेकर "तासु चरन सिर नाइ करि प्रेम-सहित मति-धीर; गयउ गरुड़ बैकुंठ तब हृदय राखि रघुबीर।" (चौ० ६३ से दो० १२५) तक दिया है।

(गरुड़-प्रश्न ४)

श्रीगरुड़जी भी श्रीकागभुशुंडिजी से पूछते हैं—

अब श्रीराम कथा अति पावनि; सदा सुखद दुख-पुंज-नसावनि
सादर तात सुनावहु मोही; बार बार बिनवौं प्रभु तोही
सुनत गरुड़ कै गिरा बिनीता; सरल सुप्रेम सुखद सुपुनीता
भयउ तासु मन परम उछाहा; लाग कहै रघुपति-गुन-गाहा

(उत्तर २०)

प्रथमहिं अति अनुराग भवानी; राम-चरित-सर कहेसि

बखानी से लेकर कथा समस्त भुसुंडि बखानी ; जो मैं तुम सन कहा भवानी। (दोहा ६३ से ६८) तक उत्तर है।

शंका—श्रीकागभुशुंडिजी ने 'राम-चरित-मानस' कहाँ से आरंभ करके कहाँ पर समाप्त किया ?

उत्तर—श्रीकागभुशुंडिजी ने समस्त रामचरितमानस की कथा वर्णन की है। किंतु इसमें मतभेद है। किसी की सम्मति है कि जय-विजय की कथा से प्रारंभ किया है और किसी की सम्मति है कि जलंधर की कथा से प्रारंभ करके समस्त रामायण का वर्णन किया है। कहते हैं कि रामचरित-मानसर से जलंधर का संबंध भी मिलता है, क्योंकि मानसर और जलंधर का रूपक एक है। जल को धरे सो जलंधर और मानसर स्वयं जल का स्थान है, इस कारण उनकी सम्मति है कि यहीं से कथा प्रारंभ हुई। और किसी की सम्मति है कि "बिमल कथा कर कीन्ह अरंभा" से लेकर "यह सुभ संभु-उमा संबादा" तक वर्णन है, कोई कहते हैं कि "रामचरितमानस यह नामा" से लेकर "फिरहिं मृगा जिमि जीव दुखारी" तक वर्णन है, और मानस-प्रचारिकाकार की सम्मति है कि "अगुनहि सगुनहि नहिं कछु भेदा" से लेकर "सुनि सिव के भ्रम-भंजन बचना ; मिटि गई सब कुतर्क की रचना" तक वर्णन है। किंतु हमारा सिद्धांत है कि कागभुशुंडिजी ने "सुनु सुभ कथा भवानि

रामचरितमानस बिमल ; कहा भुसुंडि बखानि सुना बिहँग-नायक, ए
गरुड़" से आरंभ करके "हरि-चरित्र-मानस तुम गावा ; सुनि मैं
नाथ अमित सुख पावा" तक रामचरित वर्णन किया है, क्योंकि
इसमें उपक्रम और उपसंहार ठीक मिलता है । और जो संत कहें
सो ठीक है ।

यहाँ तक में श्रीपार्वतीजी के शेष छहो प्रश्नों का उत्तर हो
गया, और उसके अंतर्गत श्रीगरुड़जी के भी ४ प्रश्नों का उत्तर
हो गया अब श्रीगरुड़जी के पाँचवें प्रश्न का वर्णन किया जाता है था

(गरुड़-प्रश्न ५)

गरुड़ जी पूछते हैं—

तुमहिं न ब्यापत काल, अति कराल कारन कवन ;
मोहिं सो कहहु कृपाल, ज्ञान-प्रभाव कि जोग-बल ।

(उत्तर ५)

श्रीकागभुशुंडिजी ने कहा कि मैंने काल को न तो ज्ञान
प्रभाव से जीता है और न योग-बल से । लोमशमुनि के आशी
र्वाद तथा श्रीरामजी के वरदान से मुझे काल नहीं व्यापता । यथा

काल कर्म गुन दोष सुभाऊ ; कछु दुख तुमहिं न ब्यापहि का
कबहुँ काल ब्यापहि नहिं तोहीं ; सुमिरेसि रूप निरंतर मो
इस पर आकाशवाणी हुई—ब्रह्म-गिरा भइ गगन गँभीरा ;

एवमस्तु तब बच मुनि ज्ञानी ; —इत्यादि ।

(प्रश्न ६)

श्रीगरुड़जी पूछते हैं—

प्रभु तव आश्रम आयउँ मोर मोह-भ्रम भाग ;
कारन कवन सो नाथ सब कहहु सहित अनुराग ।

(उत्तर ६)

श्रीकागभुशुंडिजी कहते हैं कि लोमश-मुनि ने आशीर्वाद दिया था कि तुम्हारे स्थान के निकट चार कोस तक अविद्या (माया) नहीं व्यापेगी और इसपर रामजी ने भी कहा था । यथा—

जेहि आश्रम तुम्ह बसहु पुनि सुमिरहु श्रीभगवंत ;
ब्यापै तहँ न अबिद्या जोजन एक प्रयंत ।
माया-संभव भ्रम सब अब नहिं ब्यापै तोहिं ;
जानेसि ब्रह्म अनादि अज, अगुन गुनाकर मोहिं ।

—इत्यादि ।

(प्रश्न ७)

श्रीगरुड़जी पूछते हैं—

ज्ञानहि भक्तिहि अंतर केता ; सकल कहहु प्रभु कृपा-निकेता

इस प्रश्न का उत्तर—

भक्तिहि ज्ञानहि नहिं कछु भेदा ; उभय हरहिं भव-संभव खेदा

नाथ मुनीस कहहिं कछु अंतर; सावधान सो सुनहु बिहंगबर,
से लेकर—
बिरति चर्म असि ज्ञानमद लोभ मोह रिपु मारि ;
जय पाइय सो हरि-भगति देखु खगेस बिचारि। तक है ७
(उत्तर ७)

तात्पर्य यह है कि ज्ञान पुरुष-वाचक है, और ज्ञानवान् पुरु माया-रूपी नारि का त्याग करते हैं। किंतु फिर माया-रूपी नारि लवलीन हो जाते हैं। इससे विमुक्त होने के लिये मनुष्य बहु जतन करता है, और विज्ञान-रूपी दीपक जलाते हैं, किंतु माया रूपी पवन उसे बुझा देती है। ज्ञान को माया ठग लेती है। औ भक्ति-रूपी नारी, माया-रूपी नारी में बद्ध नहीं होती क्योंकि भक्ति से माया डरती है। भक्ति-रूपी मणि माया-रूप पवन से नहीं बुझती। अतः ज्ञान से भक्ति प्रबल है। यथा—
जाते बेगि द्रवउँ मैं भाई; सो मम भक्ति भक्त-सुखदाई
सो स्वतंत्र अवलंबन आना; तेहि आधीन ज्ञान बिज्ञाना (आ०)
जे ज्ञानमान बिमत्त तव भव-हरनि भक्ति न आदरी;
ते पाइ सुर-दुर्लभ पदादपि परत हम देखत हरी (वेदोक्तम्)
जहँ लगि साधन बेद बखानी; सब कर फल हरि-भक्ति भवानी (उ०
—इत्यादि

(प्रश्न ८)

श्रीगरुड़जी पूछते हैं—

प्रथमहिं कहहु नाथ मति-धीरा ; सब ते दुर्लभ कवन सरीरा

(उत्तर ८)

नर-तन-सम नहिं कवनिउ देही ; जीव चराचर जाँचत जेही
नरक - स्वर्ग - अपबर्ग - निसेनी ; ज्ञान-बिराग-भगति-सुख-देनी
सो तनु धरि हरि भजहिं न जे नर ; होहिं बिषय-रत मंद मंदतर
काँच-किरिच बदले ते लेहीं ; कर तें डारि परस-मनि देहीं
नर-तन पाइ बिषय मन देहीं ; पलटि सुधा तें बिष सठ लेहीं
ताहिं कबहुँ भल कहइ न कोई ; गुंजा गहइ परस-मनि खोई
बड़े भाग्य मानुस-तन पावा ; सुर-दुर्लभ पुरान-स्रुति-गावा
साधन-धाम मोच्छ कर द्वारा ; पाइ न जेहि परलोक सँभारा

सो परत्र दुख पावई सिर धुनि-धुनि पछिताय ;
कालहिं कर्महिं ईस्वरहिं मिथ्या दोष लगाय ।
जो न तरइ भव-सागर नर-समाज अस पाय ;
सो कृत निंदक मंदमति आतमहन गति जाय ।

प्रश्न—चौरासी लक्ष योनि में श्रीरामजी को अधिक प्रिय कौन है?

मम माया-संभव संसारा ; जीव चराचर बिबिध प्रकारा
सब मम प्रिय सब मम उपजाए ; सब ते अधिक मनुज मोहिं भाए

तिनमहँ द्विज, द्विज महँ स्रुति-धारी; तिन महँ निगम-धरम-अनुसारी
तिन महँ प्रिय बिरक्त मुनि ज्ञानी; ज्ञानिहु ते अति प्रिय बिज्ञानी
तिन ते पुनि मोहिं प्रिय निज दासा; भक्ति मोरि नहिं दूसरि आसा
सब ते अधिक दास पर प्रीती;
ज्ञानिहिं प्रभुहिं विशेष पियारा; —इत्यादि।

(प्रश्न ९)

श्रीगरुड़जी पूछते हैं—

"बड़ दुख कवन ?"

(उत्तर ९)

श्रीकागभुशुंडिजी कहते हैं—

"नहिं दरिद्र-सम दुख जग माहीं।"

दुःख कई प्रकार का होता है। किसी को पुत्र-दुःख, किसी को धन-दुःख, किसी को बुढ़ापे का दुःख, किसी को भोजन-दुःख, किसी को अन्न-जल-फलादि न मिलने से दुःख और किसी की इच्छा की पूर्ति होने पर भी भारी तृष्णा के कारण दुःख होता है यथा—"तृष्णा केहि न कीन्ह बौराहा" कारण वह संतोष-रहित है, इत्यादि, परंतु संसार में सब से बड़ा दुःख दरिद्रता ही है।

(प्रश्न १०)

श्रीगरुड़जी पूछते हैं—

"कवन सुख भारी ?"

(उत्तर १०)

श्रीकागभुशुंडिजी कहते हैं—

"संत-मिलन सम सुख कछु नाहीं ।"

यहाँ पर फिर प्रश्न होता है कि संत-मिलन कब होता है और उनके मिलने से क्या सुख प्राप्त होता है ? सो दिखाते हैं—

जब द्रवहिं दीनदयालु राघव साधु-संगति पावहीं ;
तेहि दरस-परस-समागमादिक पाप-रासि नसावहीं (वि०)
सरदातप ससि निसि अपहरई; संत-दरस जिमि पातक टरई (आ०)
संत बिसुद्ध मिलहिं पुनि तेही; चितवहिं राम कृपाकरि जेही (उ०)
जब रघुबीर अनुग्रह कीन्हा; तब तुम मोहिं दरस हठ दीन्हा (सुं०)
पुन्य-पुंज बिनु मिलहिं न संता; सतसंगति संसृति कर अंता
बड़े भाग पाइय सतसंगा; बिनहि प्रयास होहि भव भंगा
संत-संग अपबर्ग कर कामी भव कर पंथ ;
कहहिं संत कबि कोबिद स्रुति पुरान सदग्रंथ । (उ०)
तात स्वर्ग-अपबर्ग-सुख धरिय तुला इक अंग ;
तुलै न ताहिं सकल मिलि जो सुख लव सतसंग । (सुं०)
सतसंगति दुर्लभ संसारा ; निमिष दंड भरि एकहु बारा (उ०)
गिरिजा संत-समागम-सम न लाभ कछु आन ;

बिनु हरि-कृपा होइ नहिं गावहिं बेद पुरान । (उ०)

प्रथम भगति संतन कर संगा ;
अस बिचारि जेइ कर सतसंगा; —इत्यादि ।

(प्रश्न ११)

श्रीगरुड़जी कागभुशुंडिजी से पूछते हैं—

संत-असंत-मरम तुम जानहु ; तिन्हकर सहज सुभाव बखानहु

(उत्तर ११)

श्रीकागभुशुंडिजी उत्तर देते हैं—

पर-उपकार बचन-मन-काया ; संत सहज सुभाव खगराया
संत सहहिं दुख परहित लागी ; पर दुख हेतु असंत अभागी
भूरुज-तरु-सम संत कृपाला ; परहित नित सह बिपति बिसाला
कोमल चित दीनन्ह पर दाया ; मन बच क्रम मम भगति अमाया
सबहि मानप्रद आपु अमानी ; भरत प्रान-सम मम ते प्रानी
बिगत-काम मम नाम-परायन ; सांति बिरति बिनती मुदितायन
सीतलता सरलता मइत्री ; द्विज-पद-प्रीति धरम-जनयित्री
ये सब लच्छन बसहिं जासु उर ; जानहु तात संत संतत फुर
समदमनियमनीतिनहिंडोलहिं ; परुष बचन कबहूँ नहिं बोलहिं

निंदा अस्तुति उभय सम ममता मम पद-कंज ;
ते सज्जन मम प्रान-प्रिय गुन-मंदिर सुख-पुंज । (उ०)

खट बिकार जित अनघ अकामा ; अचल अकिंचन सुचि सुखधामा
अमित बोध अनीह मित-भोगी ; सत्य-सार कबि कोबिद जोगी
सावधान मानद मद-हीना ; धीर भगति-पथ परम प्रबीना
गुनागार संसार-दुख-रहित बिगत संदेह ;
तजि मम चरन-सरोज प्रिय जिन्ह कहँ देह न गेह ।
निज गुन स्रवन सुनत सकुचाहीं ; पर गुन सुनत अधिक हरषाहीं
सम सीतल नहिं त्यागहिं नीती ; सरल स्वभाव सबहिं सन प्रीती
जप तप ब्रत दम संजम नेमा ; गुरु- गोबिंद- बिप्र- पद- प्रेमा
स्रद्धा छमा मइत्री दाया ; मुदिता मम पद-प्रीति अमाया
बिरति बिबेक बिनय बिज्ञाना ; बोध जथारथ बेद पुराना
दंभ मान मद करहिं न काऊ ; भूलि न देहिं कुमारग पाऊँ
गावहिं सुनहिं सदा मम लीला ; हेतु-रहित पर- हित- रत- सीला
सुनु मुनि साधुन के गुन जेते ; कहि न सकहिं सारद स्रुति तेते

इत्यादि । ये संपूर्ण लक्षण तो संतों के हुए, अब आगे असंतों के लक्षण कहते हैं । यथा—

सन इव खल परबंधन करई ; खाल कढ़ाइ बिपति सहि मरई
खल बिनु स्वारथ पर-अपकारी ; अहि मूषक इव सुनु उरगारी
पर संपदा बिनासि नसाहीं ; जिमि ससि हति हिमउपल बिलाहीं
दुष्ट-उदय जग-आरत हेतू ; जथा प्रसिद्ध अधम ग्रह केतू—इत्यादि ।

(प्रश्न १२)

श्रीगरुड़जी प्रश्न करते हैं—

" कवन पुन्य स्तुति-बिदित बिसाला ? "

(उत्तर १२)

श्रीकागभुशुंडिजी उत्तर देते हैं—

" परम धरम स्तुति-बिदित अहिंसा । "

शंका—यहाँ शंका होती है कि श्रीगरुड़जी ने तो पुण्य का प्रश्न किया, किंतु श्रीकागभुशुंडिजी ने धर्म का उत्तर क्यों दिया ?

उत्तर—श्रीकागभुशुंडिजी ने जो धर्म का उत्तर दिया वह पुण्य-शब्द के प्रतिकूल नहीं है । क्योंकि धर्म और पुण्य एक ही है । यथा—

पुण्य एक जग महँ नहिं दूजा ; मन क्रम बचन बिप्र-पद-पूजा
धरम-परायन सोइ कुल-त्राता ; राम-चरन जाकर मन राता
धरम न दूसर सत्य-समाना ; आगम निगम पुरान बखाना
प्रथमहिं बिप्र-चरन अति प्रीती ; निज निज धरम-निरत स्तुति-नीती

बर्नास्रम निज निज धरम निरत बेद-पथ लोग ;
चलहिं सदा पावहिं सुखहिं नहिं भय सोक न रोग ।

सत्य-मूल सब सुकृत सुहाए ; बेद - पुरान - बिदित मनु गाए
स्तुति कह परम धरम उपकारा ;

पर-हित-सरिस धरम नहिं भाई;
धरम कि दया-सरिस हरियाना;
चारिउ चरन धरम जग माहीं; पूरि रहा सपनेहुँ अघ नाहीं
प्रकट चारि पद धरम के कलि महँ एक प्रधान;
येन केन बिधि दीन्हे दान करइ कल्यान।—इत्यादि।

(प्रश्न १३)

श्रीगरुड़जी प्रश्न करते हैं—

"कहहु कवन अघ परम कराला ?"

(उत्तर १३)

श्रीकागभुशुंडिजी कहते हैं—

"पर-निंदा-सम अघ न गिरिसा।"

नहिं असत्यसम पातकपुंजा; गिरिसमहोहिं कि कोटिकगुंजा(अ०)
सब कै निंदा जे नर करहीं; ते चमगादुर होइ अवतरहीं (उ०)
हरि-हर-निंदा सुनहिं जो काना; होय पाप गोघात-समाना (लं०)
सुखी कि होहिं कबहुँ हरि-निंदक; (उ०)

पर निंदा सुनि स्रवन मलिन भए, बचन दोष पर गाए,
बिषय-बासना हृदय मलिन भए, नयन निरखि पर नारि,
मोह-जनित मल लाग बिबिध बिधि, निज सरूप बिसराय,
राम-चरन-अनुराग-नीर बिनु मल अति नास न पावै।(वि०)

प्रश्न—अंतःकरण का मल किस तरह छूट सकता है ? उत्तर—
प्रेम-भगति-जल बिनु रघुराई; अभ्यंतर-मल कबहुँ न जाई
उर कछु प्रथम बासना रही; प्रभु-पद-प्रीति-सरित सो बही—इत्यादि ।

(प्रश्न १४)

श्रीगरुड़जी पूछते हैं—

"मानस-रोग कहहु समुझाई ; तुम सर्बज्ञ कृपा अधिकाई"

(उत्तर १४)

श्रीकागभुशुंडिजी कहते हैं—

सुनहु तात अब मानस-रोगा ; जेहि ते दुख पावहिं सब लोगा
मोह सकल ब्याधिन कर मूला ; तेहि तें पुनि उपजै बहु सूला
काम बात कफ लोभ अपारा ; क्रोध पित्त नित छाती जारा
प्रीति करहिं जो तीनिउ भाई ; उपजइ सन्निपात दुखदाई
बिषय मनोरथ दुर्गम नाना ; ते सब सूल नाम को जाना
ममता दादु कंडु इरषाई ; हरष बिषाद गरह बहुताई
परसुख देखि जरनि सोइ छई ; कुष्ठ दुष्टता मन कुटिलई
अहंकार अति दुखद डवँरुआ ; दंभ कपट मद मान नहरुआ
तृस्ना उदर-बृद्धि अति भारी ; त्रिबिध ईषना तरुन तिजारी
जुगबिधि ज्वर मत्सर अबिबेका ; कहँ लगि कहउँ कुरोग अनेका

एक ब्याधि-बस नर मरहिं ए असाध्य बहु ब्याधि ;

पीडहिं संतत जीव कहँ सो किमि लहइ समाधि ?
नेम धरम आचार तप ज्ञान जज्ञ जप दान ;
भेषज पुनि कोटिन्ह नहिं रोग जाहि हरिजान ।
यहि बिधि सकल जीव जड़ रोगी; सोक-हरष-भय-प्रीति-बियोगी
मानस-रोग कछुक मैं गाए; हैं सब के लखि बिरलै पाए

ये मानस-रोग, जो मैंने कहे हैं, सब प्राणियों के होते हैं। यद्यपि मनुष्य इनसे छूटने के लिये उपाय करता है, किंतु छूटता नहीं। अतः अब इनसे छूटने का उपाय, वैद्य और सद्गुरु के रूपालंकार द्वारा, बताया जाता है। यथा—

सद्गुरु - बैद्य - बचन - बिस्वासा; संयम यह न बिषय कै आसा
रघुपति-भगति सजीवनि-मूरी; अनूपान स्रद्धा अति रूरी
यहि बिधि भलेहि कुरोग नसाहीं; नाहिंत जतन कोटि नहिं जाहीं

किंतु यह कैसे जाना जाय कि जीव रोग से छूट गया ? उत्तर—

जानिय तब मन बिरुज गोसाईं; जब उर बल बिराग अधिकाई
सुमति-छुधा बाढ़इ नित नई ; बिषय - आस - दुर्बलता गई

जब प्राणी निर्मल ज्ञान-रूपी जल से स्नान करे, तब उसके हृदय में राम-भक्ति भर जाय। यथा—

बिमल ज्ञान-जल जब सो नहाई; तब रह राम-भगति उर छाई
—इत्यादि।

यहाँ तक श्रीगरुड़जी के १४ प्रश्नों का भी उत्तर हो गया। अब श्रीलक्ष्मणजी के ६ प्रश्नों का उल्लेख करते हैं।

श्रीलक्ष्मणजी के ६ प्रश्न आरण्यकांड में, एक ही स्थान पर, आए हैं। यथा—

कहहु ज्ञान बिराग अरु माया; कहहु सो भगति करहु जेहि दाया

ईश्वर जीवहि भेद प्रभु सकल कहहु समुझाइ;
जाते होइ चरन-रति सोक मोह भ्रम जाइ।

इन छः प्रश्नों में से (१) ज्ञान, (२) वैराग्य और (३) भक्ति-विषयक तीन प्रश्नों के उत्तर पाठकगण श्रीपार्वतीजी के १२ वें प्रश्न के अंतर्गत विस्तार-पूर्वक पढ़ चुके हैं। शेष तीन प्रश्नों [अर्थात् (१) माया, (२) ईश्वर और (३) जीव] के उत्तर यहाँ दिए जाते हैं।

(१) माया के विषय में श्रीरामजी कहते हैं—

थोरेहि महँ सब कहउँ बुझाई; सुनहु तात मति मन चित लाई
मैं अरु मोर तोर तैं माया; जेहि बस कीन्हे जीव निकाया
गो गोचर जहँ लगि मन जाई; सो सब माया जानेहु भाई
तेहिकर भेद सुनहु तुम्ह सोऊ; बिद्या अपर अबिद्या दोऊ
एक दुष्ट अतिसय दुख-रूपा; जा बस जीव परा भव-कूपा
एक रचइ जग गुनबस जाके; प्रभु-प्रेरित नहिं निजबल ताके (आ०)

(२ और ३) ईश्वर और जीव के विषय में श्रीरामजी कहते हैं—

माया ईश न आपु कहँ जानि कहै सो जीव ;
बंध-मोक्ष-प्रद सर्वपर माया प्रेरक सींव । (आ०)

अन्यत्र भी कहा है—

जासु सत्यता ते जड़ माया ; भास सत्य इव मोह सहाया (बा०)
मायापति भगवान, भजिय महामाया-पतिहि ।
जो माया सब जगहिं नचावा ; जासु चरित लखि काहु न पावा(उ०)
हरष बिषाद ज्ञान अज्ञाना ; जीवधरम अहमिति अभिमाना
विषयकरन सुरजीव समेता ; सकल एक ते एक सचेता (बा०)
ईस्वर-अंस जीव अबिनासी ; चेतन अमल सहज सुखरासी
सो माया-बस भयउ गोसाईं ; बँधेउ कीर मरकट की नाईं
तब ते जीव भयउ संसारी ; ग्रंथि न छूटि न होहि सुखारी (उ०)
भूमि परत भा ढाबर पानी ; जनु जीवहिं माया लपटानी (कि०)
माया-बस रह जीव रहहिं सदा संतत मगन (आ०)
मायापति भगवान जोइ बाँधै सोइ छोरै । (विनय)
द्वैतबुद्धि बिनु क्रोध की द्वैत कि बिनु अज्ञान ;
माया-बस परछिन्न जड़ जीव कि ईस समान ? (उ०)
सुरसरि-जल-कृत बारुनि जाना ; कबहुँ न संत करहिं तेहि पाना
सुरसरि मिले सो पावन जैसे ; ईस अनीसहि अंतर तैसे (बा०)

ज्ञान अखंड एक सीताबर ; माया-बस्य जीव सचराचर (उ०)
माया-बस्य जीव अभिमानी ; ईस-बस्य माया गुन-खानी
परबस जीव स्वबस भगवंता ; जीव अनेक एक श्रीकंता
जगत प्रकास्य प्रकासक रामू ; मायाधीस ज्ञान-गुन-धामू (बा०)
—इत्यादि ।

इस प्रकार श्रीरामचरितमानस में जो ४१ प्रश्न किए गए हैं, उनको संक्षिप्त उत्तर-सहित दिखला दिया गया । आशा है, इस क्रम को समझ लेने से, मानस-प्रेमियों को, श्रीरामायण के पाठ में, बहुत आनंद मिलेगा ।

इति श्रीरामचंद्रार्पणमस्तु ।

श्रीसीतारामाभ्यां नमः

श्रीमते रामानंदाय नमः

श्रीमद्गोस्वामि तुलसीदास-कृत

श्रीमानसरामायण-प्रश्नोत्तरार्थ-प्रकाश

उत्तरार्ध

प्रश्न—बालकांड के आदि में ७ श्लोक क्यों लिखे गए ?

उत्तर—रामचरितमानस में सप्त सोपान-रूपी सात कांड हैं, इसलिये ग्रंथ के आरंभ में ७ ही श्लोकों में मंगलाचरण किया गया। यथा—

> राम-चरित-सर रचन है सप्त प्रबंध सोपान;
> कबिता प्रथमहि कांड में सप्त श्लोक बखान।

प्र०—रामचरितमानस में ७ ही सोपान क्यों हैं ?

उ०—सात लोक ऊपर, सातलोक नीचे तथा सप्त द्वीप वसुंधरा में परमेश्वर श्रीसीतारामजी का यश-विभूति-प्रताप छा रहा है, इसलिये श्रीगोसाईंजी ने सात ही सोपान वर्णन किए। इस मानस

का वर्णन बालकांड में सप्त प्रबंध सुभग सोपाना ; ज्ञान-नयन निरखत मन माना से आरंभ करके यहि महँ रुचिर सप्त सोपाना; रघुपति-भगति केर पथ नाना तक किया गया है।

प्र०—बालकांड के आरंभ में ५ सोरठा लिखने का क्या हेतु ?

उ०—पंचदेव की वंदना करने के लिये ५ सोरठाएँ लिखी गईं। यथा—

बहुरि सोरठा पाँच कहि पंच देवता मान;
श्रीगनेस रबि बिस्नुपद उमासंभु सुभजान।
प्रथम सोरठा गनपतिहि दो त्रय बिस्नुहि जान;
चौथ सिवासिव को कही पंचम गुरु नत भान।

करि मज्जन पूजहिं नर नारी ; गनपति गौरि पुरारि तमारी
रमा-रमन-पद बंदि बहोरी; बिनवहिं अंजुल अंचल जोरी (अ०)

प्र०—राम-नाम कर अमित प्रभावा ; संत पुरान उपनिषद गावा ऐसा राम-नाम का प्रभाव कौन-कौन जानते हैं और उससे क्या फल मिलता है ?

उ०—जान आदि कबि तुलसी नाम-प्रभाव ;
उलटा जपत कोल ते भए ऋषिराव। (बरवै)

नाम-प्रभाव जान सिव नीको; कालकूट फल दीन्ह अमी को
चहुँ जुग चहुँ स्रुति नाम प्रभाऊ; कलि बिसेष नहिं आन उपाऊ

निरगुन ते एहि भाँति बड़ नाम-प्रभाव अपार;
कहेउ नाम बड़ राम ते निज बिचार-अनुसार।
अपत अजामिल गज गनिकाऊ; भए मुक्त हरि-नाम-प्रभाऊ (बा०)
राम-नाम कल्पतरु देत फल चारी रे;
कहत पुरान बेद पंडित पुरारी रे। (विनय)
तुलसी सुमिरत राम सुलभ फल चारि;
बेद पुरान पुकारत कहत पुरारि।
आगम निगम पुरान कहत करि लीक;
तुलसी राम-नाम कर सुमिरन नीक।
कलि नहिं ज्ञान बिराग न जोग समाधि;
राम-नाम जपु तुलसी नित निरुपाधि।
तप तीरथ मख दान नेम उपवास;
सब ते अधिक राम जपु तुलसीदास। (बरवै)
राम-नाम-महिमा सुर कहहीं; सुनि सुनि अवध लोग सुख लहहीं (अ०)

प्र०—मन-रूपी मुकुर में मल क्या है ? और वह मल किस प्रकार छूट सकता है ?

उ०—विषय-वासना-रूपी मल है । उसके साफ़ करने के लिये श्रीगुरुदेव के चरण-कमलों की पवित्र रज है । यथा—

जन-मन-मंजु-मुकुर-मल-हरनी; किए तिलक गुनगन बस करनी

श्रीगुरुचरन-सरोज-रज निज मन-मुकुर सुधार (बा०)

प्र०—किसका सुमिरन करने से दिव्य दृष्टि होती है ?

उ०—श्रीगुरुदेव के चरण-नखों के स्मरण करने से। यथा—

श्रीगुरु-पद-नख-मनिगन-ज्योती;सुमिरतदिब्यदृष्टिजेहिहोती(बा०)

प्र०—सब को सुख तथा लोक और परलोक में सद्गति देनेवाला कौन है ?

उ०—श्रीरामजी का पवित्र नाम। यथा—

सुमिरत सुलभ सुखद सब काहू; लोक-लाहु परलोक-निबाहू (बा०)

प्र०—परमेश्वर का रूप हृदय में कब आवेगा ?

उ०—जपहि सदा रघुनायक नामा;

सुमिरिय नाम रूप बिनु देखे; आवत हृदय सनेह बिसेखे

मन थिर करि तब संभु सुजाना; लगे करन रघुनायक-ध्याना

हर-हिय राम-चरित सब आए; प्रेम-पुलक लोचन जल छाए

श्रीरघुनाथ-रूप उर आवा ; परमानंद अमित सुख पावा

मज्जहिं सज्जन बृंद बहु पावन सरजू-नीर;

जपहिं राम धरि ध्यान उर सुंदर स्याम सरीर।(बा०)

प्र०—मोह-रूपी शत्रु को जीतने का क्या उपाय है ?

उ०—सेवक सुमिरत नाम सप्रीती ; बिनु स्रम प्रबल मोह-दल जीती

सुमिरत राम हृदय अस आवा ;

सुमिरत हरिहि स्राप-गति बाधी ;
सुमिरहिं ब्रह्म सच्चिदानंदा ;
राम-नाम सिव सुमिरन लागे ; (बा०)

प्र०—श्रीरामजी कैसे वश होते हैं ? और किसने उन्हें वश किया ?

उ०—सुमिरि पवन-सुत पावन नामू ; अपने बस करि राखे रामू (बा०)

प्र०—ब्रह्म-सुख क्या है ? तथा गूढ़ मति जानने का उपाय क्या है ?

उ०—ब्रह्म-सुखहिं अनुभवहि अनूपा ; अकथ अनामय नाम न रूपा
जानी चहहिं गूढ़ गति जेऊ ; नाम जीह जपि जानहिं तेऊ (बा०)

प्र०—अणिमादिक सिद्धि पाने के साधन क्या हैं ?

उ०—साधक नाम जपहिं लौलाए ; होहिं सिद्ध अनिमादिक पाए (बा०)

प्र०—आरत जन के संकट कब मिटते हैं ?

उ०—जपहिं नाम जन आरत भारी ; मिटहिं कुसंकट होहिं सुखारी (बा०)

प्र०—जगत् में कितने प्रकार के राम-भक्त हैं ?

उ०—राम-भगत जग चारि प्रकारा ; सुकृती चारिउ अनघ उदारा (बा०)

प्र०—चारों का आधार क्या है, और इन चारों में प्रभु को विशेष प्रिय कौन है ?

उ०—चहु चतुरन्ह कर नाम अधारा ; ज्ञानी प्रभुहि बिसेष पियारा (बा०)

परिहरि सकल भरोस, रामहिं भजहिं ते चतुर नर। (आ०)
तुलसी जे अति चतुरता राम-चरन लवलीन ;

सियाराम निसि दिन जपहिं सोई चतुर प्रबीन। (दो०)

प्र०—सब चतुरों में शिरोमणि कौन है ?

उ०—चतुर-सिरोमनि तेइ जग माहीं; जेहि मनि लागि सो जतन कराहीं

चतुर-सिरोमनि राम-सिय हिय गुन कपट बिसार;
भजहि सरलता धारि के सोइ चातुर्य निहार। (रघु०गु०द०)

जो भजे भगवान सयान सोई तुलसी ज्यों चातक नेम लिये (क०)

प्र०—श्रीरामजी कैसे रीझते हैं ? किसके ऊपर रीझकर क्या देते हैं ?

उ०—मैं कछु कहौं एकबल मोरे; तुम रीझहु सनेह सुठि थोरे (बा०)

रीझत राम सनेह निसोते (बा०)
रीझहिं देखि तोर चतुराई (भुशुंडि) (उ०)
खीझहिं निज धाम देत, रीझहिं बस होत हैं।
रीझहिं राजकुँवरि छबि देखी।

कहत नसाइ होइ हिय नीकी; रीझत राम जानि जन-जीकी

प्रभु तरु तर कपि डार पर ते किय आपु समान;
तुलसी कहूँ न राम से साहब सील-निधान। (बा०)

प्र०—श्रीरामजी ने अपने अनुरूप क्या किया ?

उ०—हनुमदादि सब बानर बीरा; धरेउ मनोहर मनुज-सरीरा (उ०)

जेहि समान अतिसय नहिं कोई; ताकर सील कस न अस होई (अ०)

प्र०—श्रीगोसाईंजी ने अपने प्रबंध को भाषा में रचने की प्रतिज्ञा

करके बीच-बीच में संस्कृत-श्लोकों की रचना क्यों की ? यथा—
भाषा-बंध करब मैं सोई ; मोरे मन प्रबोध जेहि होई
उ०—संस्कृतं प्राकृतं चैव सौरसेनं च मागधं ;
पारसीयमपभ्रंशं भाषाया लक्षणानि षट् ।
संस्कृत प्राकृत पारसी बिबिध देस के बयन ;
भाषा ताको कहत कबि तथा किन्ह मय अयन। (विश्राम.)
हिंदी उर्दू संसकृत मागध बोलत जौन ;
सूरसेन अरु पारसी-युत भाषा है तौन ।

प्र०—पापों से मुक्त होने के विषय में वेद-पुराण में क्या कहा है ?

उ०—दरस परस मज्जन अरु पाना ; हरै पाप कह बेद-पुराना
बिबसहु जासु नाम नर कहहीं ; जनम अनेक सँचित अघ दहहीं (बा०)
जासु नाम-पावक अघ-तूला ; सुमिरत सकल अमंगल मूला (अ०)
तीरथ अमित कोटि सत पावन ; नाम अखिल अघ-पुंज-नसावन (उ०)
समन सकल संताप सोक के ; प्रिय पालक परलोक लोक के (बा०)
राज कि रहै नीति बिनु जाने ; अघ कि रहै हरि-चरित बखाने (उ०)
सादर मज्जन पान किए ते ; मिटहि पाप-परिताप हिए ते (बा०)
सनमुख होइ जीव मोहिं जबहीं ; कोटि जनम अघ नासै तबहीं (सुं०)
देखत पुरी अखिल अघ भागा ; बन उपबन बाटिका तड़ागा (उ०)
सरदातप सासि-निसि अपहरई ; संत-दरस जिमि पातक टरई (अ०)

संत-दरस पातक टरे परसत करम बिलाय ;
बचन सुनत तम मोह गत पूरन भाग मिलाय।(वै०सं०)

प्र०—इस कुटिल कलिकाल में कपट, कुतर्क, दंभ, पाखंड सब कैसे नाश हो सकते हैं ?

उ०—कुपथ कुतर्क कुचालि कलि कपट दंभ पाखंड ;
दहन राम गुन-ग्राम जिमि ईंधन अनल प्रचंड।

विमल कथा कर कीन्ह अरंभा ; सुनत नसाइ काम-मद-दंभा
त्रिबिध दोष दुख-दारिद-दावन; कलि कुचाल कलि-कलुष नसावन
काम कोह मद मोह नसावन ; बिमल बिबेक बिराग बढ़ावन

प्र०—तेहि अवसर भंजन महि-भारा ; हरि रघुबंस लीन्ह अवतारा
पिता-बचन तजि राज उदासी ; दंडक-बन बिचरत अबिनासी

इस वाक्य में 'तेहि अवसर' में जन्म, बाल-लीला, विवाह और वन-वास कैसे हुआ ?

उ०—इन दोनों चौपाइयों का अन्वय इस प्रकार है—

महिभारा-भंजन हरि रघुबंस अवतारा लीन्ह, पिता-वचन तजि राज-उदासी अबिनासी तेहि अवसर दंडक-बन बिचरत ।

एक बार त्रेता-युग में—"मुनि सन बिदा माँगि त्रिपुरारी ; चले भवन सँग दच्छ-कुमारी। 'तेहि अवसर' दंडक-बन आए" उसी समय दंडक-वन में श्रीरामजी आए।

'तेहि अवसर' तीन जगह पाठ है। यथा—

एहि बिधि भए सोच-बस ईसा; 'तेही समय' जाइ दससीसा
संभु'समय तेहि' रामहि देखा; उपजा हिय अति हरष बिसेखा(बा०)

प्र०—किसका सुमिरन करने से अज्ञान मिट जाता है ?

उ०—सुमिरत जाहि मिटै अज्ञाना; सोइ सरबज्ञ राम-भगवाना
संकर सहज सरूप सँभारा ; लागि समाधि अखंड अपारा(बा०)

निज आतमा सो जानिये परमातमा-स्वरूप;
सब बिधि अगम अगाध हौ मूरति राम अनूप।

प्र०—सहज-स्वरूप क्या है ?

उ०—स्थूल, सूक्ष्म और कारण तीनों शरीरों से भिन्न, पंच कोशादि तथा सत् रज तम तीनों गुणों से अतीत, जाग्रत् स्वप्न सुषुप्ति तीनों अवस्थाओं से परे और तुरीय अवस्था में प्राप्त, विमल आनंद की राशि, शुद्ध सच्चिदानंदघन-स्वरूप ही सहज-स्वरूप है। यथा—

ईस्वर-अंस जीव अबिनासी; चेतन अमल सहज सुख-रासी
सो मायाबस भयउ गोसाईं; बँधेउ कीर-मरकट की नाईं (उ०)
भूमि परत भा ढाबर पानी ; जनु जीवहि माया लपटानी
बहु प्रकार तिन्ह ज्ञान सिखावा;देह-जनित अभिमान छोड़ावा(कि०)

कोउ कह सत्य झूठ कह कोऊ जुगल प्रबल करि मानै ;

तुलसिदास परिहरै तीन भ्रम सो आपन पहिचानै। (विनय)
मम दरसन-फल परम अनूपा ; जीव पाव निज सहज सरूपा (बा०)
नेति नेति जेहि बेद निरूपा ; चिदानंद निरुपाधि अनूपा
चिदानंद-मय देह तुम्हारी ; बिगत-बिकार जान अधिकारी (अ०)

प्र०—नारदजी तो त्रिकालदर्शी हैं, फिर ऐसा क्यों कहा गया कि "नारद हू यह भेद न जाना ; दसा एक समझत बिलगाना?" कौन ऐसा भेद है जिसे नारदजी नहीं जानते ?

उ०—सुनिमुनि-गिरासत्यजियजानी ; दुख दंपतिहि उमा हरखानी
सकल सखी गिरिजा गिरि मयना ; पुलकसरीर भरे जल नयना (बा०)

हस्त-रेख लखि नारदहि सखि दंपति बिलखाय ;
उमा हरष पतिगुन समझि पुलक नयन जल छाय।

समरथ को नहिं दोष गोसाईं ; रबि पावक सुरसरि की नाईं (बा०)

हरि रबि पावक सुरसरी इन सम दोष न जान ;
गोसाईं कहि बिष्णु को समरथ चतुर प्रमान।

प्र०—कोटि योग जप साधन करने पर भी इच्छित फल क्यों नहीं मिलता ?

उ०—इच्छितफलबिनु सिव अवराधे ; लहिअ न कोटि जोगजप साधे

प्र०—श्री उमा-महेश्वर का चरित्र कैसा है ?

उ०—उमा-चरित सुंदर मैं गावा ; सुनहु संभु कर चरित सोहावा

संभु-चरित सुनि सरस सोहावा ; भरद्वाज मुनि अति सुख पावा (बा०)

प्र०—वेदों में ऐसा कौन परम धर्म है जिसकी संतजन सराहना करते हैं ?

उ०—सिरधरि आयसु करिय तुम्हारा ; परम धरम यह नाथ हमारा
तदपि करब मैं काज तुम्हारा ; स्रुति कह परम धरम उपकारा (बा०)

प्र०—संत जन नित्य किसकी प्रशंसा करते हैं ?

उ०—परहित लागि तजै जो देही ; संतत संत प्रसंसहिं तेही (बा०)

प्र०—श्रीशंकरजी किस-किस रस में विराजकर कैसे शोभते हैं ?

उ०—बैठे सोह काम-रिपु कैसे ; धरे सरीर सांत-रस जैसे (बा०)

प्र०—श्रीपार्वतीजी श्रीमहादेवजी से कौन कथा पूछना चाहती हैं ?

उ०—कथा जो सकल-लोक-हितकारी ; सोइ पूछन चह सैलकुमारी
तौ प्रभु हरहु मोर अज्ञाना ; कहि रघुनाथ-कथा बिधि नाना
तब कर अस बिमोह अब नाहीं ; राम-कथा पर रुचि मन माहीं

बंदौं पद धरि धरनि सिर बिनय करौं कर जोरि ;
बरनहु रघुबर-बिसद जस स्रुति-सिद्धांत निचोरि । (बा०)

प्र०—श्रीराम-चरित के गूढ़ रहस्य साधुजन किससे कहते हैं ?

उ०—गूढ़हु तत्त्व न साधु दुरावहिं ; आरत अधिकारी जहँ पावहिं

स्रोता सुमति सुसील चित कथा रसिक हरि-दास ;
पाइ उमा अति गुप्त मत सज्जन करहिं प्रकास ।

सुनि गुन-गान समाधि बिसारी; सादर सुनहिं परम अधिकारी(उ०)
सदा सुनहिं सादर नर-नारी; तेइ सुरबर मानस-अधिकारी(बा०)
राम-कथा के ते अधिकारी; जिन्हके सतसंगति अति प्यारी
गुरु-पद प्रीति नीति-रत जेई; द्विज-सेवक अधिकारी तेई (उ०)
सो सिव कागभुसुंडिहि दीन्हा; राम-भगति-अधिकारी चीन्हा
ऋषि पूछी हरि-भगति सोहाई; कही संभु अधिकारी पाई
अति आरति पूछौं सुर-राया; रघुपति-कथा कहहु करि दाया
प्रथम सो कारन कहहु बिचारी
सो दयालु राखहु जनि गोई। (बा०)

प्र०—श्रीरघुपति की माया कैसी और क्या करती है ?

उ०—सो माया सब जगहि नचावा।

ज्ञानी भगत-सिरोमनि त्रिभुवन-पति कर जान;
जाहि मोह माया प्रबल पामर करहिं गुमान। (उ०)

अति प्रचंड रघुपति कै माया; जेहि न मोह अस को जग जाया(बा०)
जो ज्ञानिन्ह कर चित अपहरई; बरिआई बिमोह मन करई

सिव बिरंचि कहँ मोहई को है बपुरा आन;
अस जिय जानहिं भजहिं मुनि मायापति भगवान। (उ०)

प्र०—अतिशय प्रबल देव-माया कैसे छूटे ?

उ०—क्रोध मनोज लोभ मद माया; छूटै सकल राम कै दाया(आ०)

अतिसय प्रबल देव कै माया; छूटै जबहि करहु तुम्ह दाया (कि०)

सो दासी रघुबीर की, समुझै मिथ्या सोपि;
छूट न राम-कृपा बिनु नाथ कहौं पन रोपि। (उ०)
जोइ बाँधै सोइ छोरै (विनय)
बंध-मोक्ष-प्रद सर्वपर माया-प्रेरक सीव। (आ०)

स्तुति पुरान बहु कहे उपाई; छूट न अधिक अधिक गरुआई (उ०)

प्र०—किसके संकल्प सत्य होते हैं?

उ०—राम कीन्ह चाहहिं सोइ होई; करै अन्यथा अस नहिं कोई (बा०)

प्र०—किसके मन में मोह होता है?

उ०—सुनु मुनि मोह होइ मन ता के; ज्ञान बिराग हृदय नहिं जाके (बा०)

प्र०—परमेश्वर का प्रण क्या है?

उ०—बेगि सो मैं डारिहौं उपारी; प्रन हमार सेवक-हितकारी (बा०)

निसिचर-हीन करौं महि भुज उठाइ पन्ह कीन्ह;
सकल मुनिन्ह के आस्रमहिं जाइ जाइ सुख दीन्ह। (आ०)

प्र०—विश्राम-दायक कौन हैं?

उ०—जो आनंद-सिंधु सुख-रासी; सीकर ते त्रैलोक सुपासी
सो सुखधाम राम अस नामा; अखिल लोक दायक बिस्रामा (बा०)

प्र०—विश्व-भरण-पालन किसका नाम है?

उ०—रामानुज सदगुन बिमल स्याम राम-अनुहार;

भरत भरत सब जगत के तुलसी बसत अकार। (सतसई)
बिस्व-भरन पोसन कर जोई, ताकर नाम भरत अस होई (बा०)

प्र०—किसके नाम का स्मरण करने से शत्रु का नाश होता है?

उ०—जाके सुमिरन ते रिपु-नासा; नाम सत्रुहन वेद प्रकासा (बा०)

प्र०—श्रीरामजी को प्यारा और समस्त सुलक्षण-संपन्न उदार कौन नाम है?

उ०—लच्छन-धाम राम-प्रिय सकल-जगत-आधार;
गुरु बसिष्ठ तेहि राखा लछिमन नाम उदार। (बा०)

प्र०—अवधपुर-वासियों के सुखदाता कौन हैं?

उ०—जिन्ह रघुनाथ-चरन रति मानी; तिन्ह की यह गति प्रगट भवानी
अजहुँ जासु उर सपनेउ काऊ; बसहि लखन सिय राम बटाऊ
राम-धाम-पथ पावहि सोई; जो पथ पाव कबहुँ मुनि कोई (अ०)

प्र०—इस संसार में ब्रह्मा ने किसको वंचित किया है?

उ०—जो न भजहि रघुबीर-पद जग बिधि-बंचक सोइ। (अ०)
जिन्ह कर मन इन्ह सन नहिं राता; ते जन बंचित किए बिधाता (बा०)

प्र०—किसका रूप देखते ही सब चराचर जीव मोहित हो जाते हैं?

उ०—जिन्ह निजरूप मोहनी डारी; कीन्हे स्वबस नगर नर-नारी
कहहु सखी अस को तन-धारी; जो न मोह यह रूप निहारी
करतल बान धनुष अति सोहा; देखत रूप चराचर मोहा (बा०)

प्र०—सब नर-नारी किसको देखकर थकित होते हैं ?

उ०—जिन्हबीथिन बिहरहिंसबभाई; थकित होहिं सब लोग लोगाई
हरि-हित-सहित राम जब जोहे; रमा-समेत रमापति मोहे (बा०)

प्र०—श्रीरामजी अवधपुर-वासियों को कौन संयोग करते हैं ?

उ०—जेहिबिधिसुखी होहिंपुरलोगा; करहिं कृपानिधि सोइ संजोगा

प्र०—श्रीरघुनाथजी प्रातःकाल प्रथम उठकर क्या करते हैं ?

उ०—प्रात पुनीतकाल प्रभु जागे; अरुनचूड़वर बोलन लागे
उठे लखन निसि बिगत सुनि अरुनसिखी-धुनि कान;
गुरु ते पहले जगतपति जागे राम सुजान ।
प्रात काल उठि कै रघुनाथा; मातु पिता गुरु नावहिं माथा
सकल सौच करि जाय नहाए; नित्य निबाहि गुरुहि सिर नाए
प्रातकाल सरजू करि मज्जन; बैठे सभा-संग द्विज सज्जन (बा०)
प्रात प्रातकृत करि रघुराई; तीरथराज देखि प्रभु जाई (अ०)
मज्जहि प्रात समेत उछाहा; कहहि परसपर हरि-गुन-गाहा
कहत कथा इतिहास पुरानी; रुचि रजनी जुग जाम सिरानी
कहहिं बसिष्ठ धरम-इतिहासा; सादर सुनहिं सहित रनिवासा
बेद पुरान बसिष्ठ बखानहिं; सुनहिं राम जद्यपि सब जानहिं
बेद पुरान सुनहिं मन लाई; आपु कहहिं अनुजन्ह समुझाई (बा०)
कहत अनुज सन कथा अनेका; भगति बिरति नृपनीति बिबेका (कि०)

अनुज सखा सँग भोजन करहीं ; मातु-पिता-आज्ञा अनुसरहीं ;
ऋषय-संग रघुबंस-मनि , करि भोजन बिस्राम ;
करि भोजन मुनिबर बिज्ञानी ; लगे कहन कछु कथा पुरानी
अनुजन्ह-संजुतभोजनकरहीं; देखिसकलजननीसुखभरहीं (बा०)

प्र०—विश्वामित्रजी अपने कार्य के बहाने अवधेश के गृह में क्या देखने आए ?

उ०—ज्ञान-बिराग सकल-गुन-अयना; सो प्रभु मैं देखबभरि नयना
अनुज-समेत देहु रघुनाथा ; निसिचर-बध मैं होब सनाथा
पुरुष-सिंह दोउ बीर, हरषि चले मुनि-भय-हरन ।
अवध-नृपति दशरथ के जाए ; पुरुष-सिंह बन खेलन आए
धनुषजज्ञ सुनि रघु-कुल-नाथा ; हरषि चले मुनिबर के साथा
चले राम-लछिमन मुनि-संगा;गए जहाँ जग-पावनि गंगा (बा०)

प्र०-कहहुनाथसुंदरदोउबालक; मुनिकुलतिलककिनृपकुल-पालक
ब्रह्म जो निगम नेति कहि गावा; उभय बेष धरि की सोइ आवा ?

उ०—कहमुनिबिहँसिकहेहुनृपनीका; बचनतुम्हार न होइ अलीका
ए प्रिय सबहिं जहाँ लगि प्रानी;
रघु-कुल-मनि दसरथ के जाए ; मम हित लागि नरेस पठाए
रघुकुल-मनि दसरथ के ढोटा ; बाल-मरालन के कल जोटा
मेरे प्रान नाथ सुत दोऊ ; तुम्ह मुनि पिता आन नहिं कोऊ (बा०

प्र०—अखिल ब्रह्मांड में सब से अधिक शोभायमान कौन है ?

उ०—सुर नर असुर नाग मुनि माहीं; सोभा असि कहुँ सुनियत नाहीं
बिस्नु चारि भुज बिधि मुख चारी; बिकट बेष मुख पंच पुरारी
बय किसोर सुषमा-सदन स्याम-गौर सुख-धाम;
अंग अंग पर वारिअहि कोटि कोटि सत काम। (बा०)
सचिव बोलि बोले खरदूषन; यह कोउ नृप-बालक नर-भूषन
नाग असुर सुर नर मुनि जेते; देखे जिते हते हम केते
हम भरि जनम सुनहु सब भाई; देखी नहिं असि सुंदरताई
जद्यपि भगिनी कीन्हि कुरूपा; बध-लायक नहिं पुरुष अनूपा (आ०)

प्र०—श्रीरामजी की समता-योग्य कौन है ? और श्रीजानकीजी की समता का वर-पुरुष कौन है ?

उ०—देखि राम-छबि कोउ एक कहही; जोग जानकी यहु बर अहही
यहि लालसा मगन सब लोगू; बर साँवरो जानकी जोगू
जेहि बिरंचि रचि सीय सँवारी; तेहि स्यामल बर रचेउ बिचारी
सिय-सोभा नहिं जाइ बखानी; जगदंबिका रूप-गुन-खानी
गिरा मुखर तन अरध भवानी; रति अति दुखित अतनपति जानी
बिष-बारुनी-बंधु प्रिय जेही; कहिय रमा-सम किमि बैदेही
जौ छबि-सुधा-पयोनिधि होई; परम रूपमय कच्छप सोई
सोभा रजु मंदर सिंगारू; मथै पानि-पंकज निज मारू

एहि बिधि उतरे लच्छि जब सुंदरता-सुख-मूल ;
तदपि सकोच समेत कबि कहहि सीय समतूल । (बा०)

प्र०—किसकी शोभा देखने-योग्य है ?

उ०—बरनत छबि जहँ तहँ सब लोगू ; अवसि देखिए देखन जोगू (बा०)

प्र०—सब प्राणियों के नयन-सुख-दाता कौन हैं ?

उ०—मुनि-पद-कमल बंदि दोउ भ्राता ; चले लोक-लोचन-सुखदाता

प्र०—किसकी छवि देखकर पलक नहीं लगती ?

उ०—राम-रूप अरु सिय-छबि देखे ; नरनारिन्ह परिहरे निमेखे (बा०)

प्र०—श्रीसीताराम की गौर-श्याम युगल जोड़ी कैसी शोभती है ?

उ०—सोहत सीय-राम कै जोरी ; छबि-सिंगार मनहुँ इकठोरी (बा०)

प्र०—सुर ब्रह्मादिक सिद्ध और मुनि सब किसकी सराहना करते हैं ?

उ०—ब्रह्मादिक सुर सिद्ध मुनीसा ; प्रभुहि प्रसंसहिं देहिं असीसा (बा०)

प्र०—सखियों के बीच में श्रीजानकीजी कैसी शोभती हैं ?

उ०—सखिन्ह मध्य सिय सोहति कैसी ; छबिगन मध्य महाछबि जैसी

प्र०—संसार में सब से अधिक सुकृती और पुण्यवान् कौन है ?

उ०—सुकृती तुम्ह समान जग माहीं ; भएउ न है कोउ होनेउ नाहीं
तुम्ह तें अधिक पुण्य बड़ काके ; राजन राम-सरिस सुत जाके (बा०)

प्र०—श्रीदशरथ नृप के साथ चारों पुत्र कैसे शोभते हैं ?

उ०—नृप-समीप सोहहिं सुत चारी ; जनु धन धरमादिक तनुधारी (बा०)

प्र०—शोभा और सुकृति की सीमा कौन हैं ?

उ०—राम सीय सोभा अवधि सुकृत अवधि दोउ राज;
जहँ तहँ पुरजन कहहिं अस मिलि नर-नारि-समाज। (बा०)

प्र०—श्रीजनकजी और श्रीदशरथजी के सुकृत के फल कौन हैं ?

उ०—जनक-सुकृत-मूरति बैदेही; दसरथ-सुकृत राम धर देही (बा०)

प्र०—संसार में श्रीराजा दशरथ और श्रीजनक नृप के समान कोई हुआ या नहीं ?

उ०-इन्हसम कोउ न भएउ जग माहीं; है नहिं कतहूँ होनेउ नाहीं (बा०)

प्र०—जनकपुर में जन्म लेनेवाले नर-नारियों को सुकृत का क्या फल मिला ?

उ०—हम सब सकल सुकृत कै रासी; भए जग जनमि जनकपुरबासी

प्र०—सकल-सुकृत-संपन्न जनकपुर-वासियों को क्या लाभ हुआ ?

उ०—जिन्ह जानकी-राम-छबि देखी; को सुकृती हम सरिस बिसेखी

प्र०—लोचन का लाभ क्या हुआ ?

उ०—पुनि देखब रघुबीर-बिआहू; लेब भली बिधि लोचन-लाहू
कहहि परसपर कोकिलबयनी; एहि बिवाह बड़ लाभ सुनयनी (बा०)

प्र०—भाग्यवान् कौन है ?

उ०—भाग्य-बिभव अवधेस कर देखि देव ब्रह्मादि;
लगे सराहन सहस-मुख जानि जनम निज बादि।

तीन काल त्रिभुवन जग माहीं; भूरि भाग्य दसरथ-सम नाहीं
दसरथ सहित समाज बिराजे ; बिभव बिलोकि लोकपति लाजे
कोसलपतिकरदेखसमाजू; अति लघुलाग तिन्हहिं सुरराजू (बा०)
अवधराज सुरराज सिहाहीं ; दसरथ-धनलखिधनदलजाहीं(अ०)
जाकर नाम सुनत सुभ होई ; मोरे गृह आवा प्रभु सोई
कीन्ह जोरि कर बिनय बड़ाई ; कहि निज भाग्य-बिभव बहुताई

ते पद पखारत भाग्य-भाजन जनक जयजय सब कहैं (बा०)

बिधि हरिहर सुरपति दिसिनाथा ; बरनहिं सब दसरथ-गुन-गाथा

राम लखन तुम्ह सत्रुहन सरिस सुअन सुचि जासु ।
सब प्रकार भूपति बड़भागी । (अ०)

प्र०—सिंदूर-दान के समय श्रीराम-सीता कैसे शोभते हैं ?

उ०—राम सीय सिर सेंदुर देहीं ; सोभा कहि न जात बिधि केहीं
अरुन पराग जलज भरि नीके ; ससिहि भूष अहि लोभ अमीके

प्र०—यदि जन्म-मरण से छूटना चाहे, तो उसका सुगम उपाय क्या है ?

उ०—जन्म-मरण से छूटने के अनेक उपाय हैं; किंतु परमात्मा के नाम का स्मरण करना, उसका रूप हृदय में धारण करना, उसकी लीला का गान करना तथा उसके धाम में निवास करना, ये नाम-रूप-लीला-धाम चार सुगम उपाय हैं । यथा—

नाम रूप लीला प्रभू धाम ध्यान उपकार ;
गुरु सज्जन हरि सेवही भक्ति ज्ञान भवपार ।

प्र०—नाम की क्या महिमा है ?

उ०—जासु नाम सुमिरत इकबारा; उतरहिं नर भवसिंधु अपारा (अ०)
सादर सुमिरन जे नर करहीं ; भव-बारिधि गोपद इव तरहीं (बा०)
पापिउ जाकर नाम सुमिरहीं ; अति अपार भवसागर तरहीं (कि०)
बारक नाम कहत जग जेऊ ; होत तरन तारन नर तेऊ (अ०)
नाथ नाम तव सेतु, नर चढ़ि भवसागर तरहिं (लं०)
जपि नाम तव बिनु स्रम तरहिं भव नाथ सो स्मरामहे (उ०वे०)
तव नाम जपामि नमामि हरी, भव-रोग-महामद-मान-अरी (उ०)
राम-नाम-बोहित भवसागर तुलसी चाहे तरन तरेसो । (वि०)
सुमिरहु राम नाम कर सेवहु साधु ;
तुलसी उतरि जाइ भव-उदधि अगाधु । (बरवै)
तुलसी के राम नाम निज नावरे (विनय)

प्र०—रूप किसे कहते हैं ?

उ०—स्यामल गात सरोरुह लोचन; सुंदरता-मंदिर भव-मोचन
जनक-सुता-समेत रघुबीरहिं ; कस न भजहु भंजन भव-भीरहिं
तरहिं न बिनु सेइय मम स्वामी ; राम नमामि नमामि नमामी
तारन्तरन हरन सब दूषन ; तुलसिदास प्रभु त्रिभुवन-भूषन

नीच टहल गृह की सब करिहौं ; पद-पंकज बिलोकि भव तरिहौं (उ०)
भव तारन कारन काज परं, मन-संभव दारुन दोष हरं। (लं०)
भव-जलधि-पोत चरनारबिंद (विनय)
बिनु हरि-भजन न भव तरहिं यह सिद्धांत अपेल। (उ०)
प्र०—लीला क्या है ?
उ०—भवसागर चह पार जो पावा ; रामकथा ताकहँ दृढ़ नावा (उ०)
निज संदेह मोह-भ्रम-हरनी ; करौं कथा भव-सरिता-तरनी (बा०)
बिरति-बिबेक-भगति-दृढ़करनी ; मोह-नदी कहँ सुंदर तरनी
कहहिं सुनहिं अनुमोदन करहीं ; ते गोपद इव भवनिधि तरहीं (उ०)
सोइ जस गाइ भगत भव तरहीं ; कृपासिंधु जन-हित तनु धरहीं (बा०)
जग-पावन कीरति बिसतरहीं ; गाइ-गाइ नर भव-निधि तरहीं
मम कृत सेतु जो दरसन करहीं ; सो बिनु स्रम भवसागर तरहीं (लं०)
बंदौं चारिउ बेद, भव-बारिधि-बोहित-सरिस। (बा०)
मोहिं सहित सुभ कीरति तुम्हारी परम प्रीति जो गाइहैं ;
संसार-सिंधु अपार पार प्रयास बिनु नर पाइहैं। (लं०)
यह चरित जे गावहिं हरि-पद पावहिं ते न परहिं भवकूपा (बा०)
बड़े भाग पाइय सतसंगा ; बिनहिं प्रयास होइ भव भंगा
उपजै राम-चरन बिस्वासा ; भवनिधि तर नर बिनहिं प्रयासा (उ०)
सकल सुमंगल-दायक रघुनायक-गुन-गान ;

सादर सुनहिं ते तरहिं भव-सिंधु बिना जलयान। (सुं०)

प्र०—धाम किसे कहते हैं?

उ०—रामधामदा पुरी सुहावनि; लोक समस्त बिदित जगपावनि
चारि खानि जग जीव अपारा; अवध तजे तन नहिं संसारा
सब बिधि पुरी मनोहर जानी; सकलसिद्धिप्रद मंगलखानी (बा०)
देखत पुरी अखिल अघ भागा; बन उपबन बापिका तड़ागा
पुनि देखु अवधपुरी अति पावनि; त्रिबिध ताप भव-दोष-नसावनि
सुर-दुर्लभ सुख करि जग माहीं; अंतकाल रघुपतिपुर जाहीं (उ०)

प्र०—सतयुग में संसार-सागर से पार होने के लिये मनुष्य क्या उपाय करते थे?

उ०—कृतयुग सब जोगी बिज्ञानी; करि हरिध्यानतरहिंभवप्रानी (उ.)
मख बिधि
जाप जज्ञ पाकरि तर करहीं; (उ०)

प्र०—त्रेता में क्या उपाय करते थे?

उ०—त्रेता बिबिध जज्ञ नर करहीं; प्रभुहिं समर्पि कर्म भव तरहीं

प्र०—द्वापर में क्या उपाय करते थे?

उ०—द्वापर परितोषत प्रभु पूजे; (बा०)
आम छाँह करि मानस-पूजा;
द्वापर, करि रघुपति-पद-पूजा; नर भव तरहि उपाय न दूजा (उ०)

प्र०—और कलिकाल में क्या उपाय है ?

उ०—राम-नाम कलि अभिमत-दाता ; हित परलोक लोक पितुमाता
नहिं कलि करम न भगति-बिबेकू ; राम - नाम - अवलंबन एकू
एहि कलिकाल न साधन दूजा ; जोग जज्ञ जप तप ब्रत पूजा
रामहि सुमिरिय गाइय रामहिं ; संतत सुनिय राम-गुन-ग्रामहिं
कलिजुग जोग जज्ञ नहिं ज्ञाना ; एक अधार राम-गुन-गाना
सब भरोस तजि जो भज रामहिं ; प्रेम-समेत गाव गुन-ग्रामहिं
सो भव तर कछु संसय नाहीं ; नाम-प्रताप प्रगट कलि माहीं
कहँ कुंभज कहँ सिंधु अपारा ; सोखेउ सुजस सकल संसारा (बा०)

कलसजोनि जिय जानेउ नाम-प्रतापु ;
कौतुक सोखेउ सागर करि जिय जापु । (बरवै)

नाम लेत भव-सिंधु सुखाहीं ; करहु बिचार सुजन मन माहीं (बा०)

कृतजुग त्रेता द्वापर पूजा मख अरु जोग ;
जो गति होय सो कलि हरि-नाम ते पावहि लोग ।
कलिजुग सम जुग आन नहिं जो नर कर बिस्वास;
गाइ राम-गुनगन बिमल भव तर बिनहिं प्रयास ।
यह कलिकाल मलायतन मन करि देखु बिचार ;
श्रीरघुनायक-नाम तजि नहिं कछु आन अधार ।

कबहुँक करि करुनाकर देही ; देत ईस बिनु हेत सनेही

नर तन भव-बारिधि कहँ बेरो ; सम्मुख मरुत अनुग्रह मेरो
करनधार सद्गुरु दृढ़ नावा ; दुरलभ साज सुलभ करि पावा
जो न तरै भवसागर नर-समाज अस पाई ;
सो कृत निंदक मंदमति आत्मा-हन गति जाइ ।
बिनु हरि-भजन न भव तरहि यह सिद्धांत अपेल ।
सेवक-सेव्य-भाव बिनु भव न तरहि उरगारि ।
भव-बारिधि-कुंभज रघुनायक ; सेवत सुलभ सकल सुखदायक
देहु भगति रघुपति अति पावनि ; त्रिबिध ताप भव-दाप-नसावनि

प्र०—कौन लोग भव-सागर में नहीं पड़ते ?

उ०—भव कि परहिं परमातम-बिंदक ?

प्र०—कौन लोग भव-सागर में पड़ते हैं ?

उ०—भव-सिंधु अगाध परे नर ते ; पद-पंकज-प्रेम न जे करते ।

प्र०—संसार में क्या करने से यश और क्या करने से अपयश होता है ?

उ०—पावन जस कि पुन्य बिनु होई; बिनु अघ अजस कि पावइ कोई
रघुपति-कीरति बिमल पताका ; दंड समान भयउ जस जाका (बा०)

प्र०—किसकी भक्ति विना जीव सुख नहीं पा सकता ?

उ०—श्रीरामजी की भक्ति विना । यथा—

सुख कि लहहि हरि-भगति बिनु
स्रुति-पुरान सदग्रंथ कहाहीं ; रघुपति-भगति बिना सुख नाहीं (उ०)

प्र०—किसके विमुख होने से जीव सुख नहीं पाता ?

उ०—राम-विमुख होने से। यथा—

अंधकार बरु रबिहि नसावै ; राम-बिमुख सुख जीव न पावै

बिमुख राम सुख पाव न कोई ;

जीव न लह सुख हरि-प्रतिकूला ;

सुख कि लहहि हरि-भजन बिनु (उ०)

जिमि सुख लहै न संकर-द्रोही (कि०)

प्र०—जन्म-मरणादि संसार-बंधन से जीव कैसे छूट सकता है ?

उ०—वासना-रहित होकर राम-नाम जपने से। यथा—

जासु नाम जपि सुनहु भवानी ; भव-बंधन काटहिं नर ज्ञानी(सुं०)

भव-बंधन ते छूटहीं नर जपि जाकर नाम। (उ०)

खगपति जाकर नाम जपि मुनि काटहिं भव-पास। (लं०)

भरत-कथा भव-बंध-बिमोचनि।

प्र०—किनके लिये जगत् में कोई वस्तु दुर्लभ नहीं है ?

उ०—परहित बस जिनके मनमाहीं ; तिनकहँ जग दुर्लभ कछुनाहीं

जो इच्छा धारै मन माहीं ; हरि-प्रसाद कछु दुर्लभ नाहीं (उ०)

प्र०—संसार में सब से दुर्लभ क्या है ?

उ०—नर-तन, सत्संग और राम-भक्ति। यथा—

बड़े भाग मानुष-तन पावा ; सुर-दुरलभ सद ग्रंथन गावा

सब ते दुरलभ मनुज-सरीरा।
सतसंगति दुरलभ संसारा ; निमिष दंड भरि एकौ बारा
सब कर फल हरि-भगति भवानी।
सब से सो दुरलभ मुनिराया ; राम-भगति-रति गत मद-माया
मुनि-दुरलभ हरि-भगति नर पावहिं बिनहिं कलेस। (उ०)
संत-सभा अरु हरि-कथा तुलसी दुरलभ दोय। (दो०)

प्र०—जगत् में नर-तन पाकर सब से बड़ी हानि क्या है ?

उ०—हानि कि यहि सम नहिं कछु भाई ;
भजिय न रामहिं नर-तन पाई (उ०)

प्र०—काल-धर्म किसको नहीं व्यापता है ?

उ०—काल-धरम ब्यापहि नहिं तेही ;
रघुपति-चरन-प्रीति-रति जेही (उ०)

प्र०—किसको कोई विघ्न नहीं व्यापता है ?

उ०—सकल बिघ्न ब्यापहि नहिं तेही ;
राम सुकृपा बिलोकहिं जेही (बा०)

प्र०—गुणज्ञ और बड़-भागी कौन है ?

उ०—सोइ गुनग्य सोई बड़-भागी ;
जो रघुबीर-चरन-अनुरागी (कि०)

प्र०—जगत् में चतुर-शिरोमणि कौन है ?

उ०—चतुर-सिरोमनि ते जग माहीं ;
जे मनि लागि सुजतन कराहीं (उ०)
परिहरि सकल भरोस रामहि भजहिं ते चतुर नर। (आ०)
जो भजै भगवान सयान सोई।
तुलसी जे अति चतुरता राम-चरन-लवलीन। (दो०)

प्र०—भक्ति-रूपी मणि किसको प्राप्त होती है ?

उ०—तुलसी हठ चातक जो रटै (विनय)
भगति पच्छ हठ नहिं सठताई
भगति-पच्छ हठ करि रहेउ दीन्ह महाऋषि स्राप।
सो मनि जदपि प्रगट जग अहई ; राम-कृपा बिनु कोउ न लहई
भाव-सहित खोजइ जो प्रानी ; पाव भगति-मनि सब-सुख-खानी
सब कर फल हरि-भगति सोहाई ; सो बिनु संत न काहू पाई
अस बिचारि जोइ कर सतसंगा ; राम-भगति तेहि सुलभ बिहंगा
भगति स्वतंत्र सकल-सुख-खानी ; बिनु सतसंग न पावहि प्रानी

प्र०—पराई निंदा करने का क्या फल है ?

उ०—पर-निंदा-सम अघ न गिरिसा।
हरि-गुरु-निंदक दादुर होई ; जनम सहस्र पाव तन सोई
सब की निंदा जो नर करहीं ; ते चमगादुर ह्वै अवतरहीं (उ०)

प्र०—सबों से बड़ा लाभ क्या है जो वेद-पुराण बताते हैं ?

उ०—लाभ कि कछु हरि-भगति-समाना ;
जेहि गावहिं स्तुति-संत-पुराना (उ०)
लाभ कि रघुपति-भगति अकुंठा (लं०)
लाभ राम-सुमिरन बड़ो बड़े बिसारे हानि । (दो०)
जिनहि न सूझ लाभ नहिं हानी । (बा०)

प्र०—जीव का स्वार्थ क्या है ?

उ०—स्वारथ साँच जीव कहँ एहा ; मन-क्रम-बचन राम-पद-नेहा
स्वारथ-परमारथ-हित एक उपाय ;
सीय-राम-पद तुलसी प्रेम बढ़ाय । (बरवै)
स्वारथ को परमारथ को कलि कामद राम को नाम बिसारे । (क०)
स्वारथ सीतानाथ सो परमारथ रघुनाथ । (दो०)

प्र०—परम परमार्थ क्या है ?

उ०—राम-ब्रह्म परमारथ-रूपा (अ०)
परमारथ-पथ परम सुजाना (बा०)
सखा परम परमारथ एहू ; मन-क्रम-बचन राम-पद-नेहू (अ०)

प्र०—शोचनीय कौन है और कौन नहीं ?

उ०—सोचिय बिप्र जो बेद-बिहीना ; तजि निज धरम बिषय-लयलीना
सोचिय नृपति जो नीति न जाना ; जेहि न प्रजा प्रिय प्रान-समाना
सोचनीय सबही बिधि सोई ; जो न छाँड़ि छल हरिजन होई

सोचनीय नहिं कोसलराऊ ; भुवन चारिदस प्रगट प्रभाऊ (अ०)

प्र०—धर्म-परायण कौन है ?

उ०—धरम-परायन सोइ कुलत्राता;राम-चरन जाकर मन राता(उ०)

प्र०—कवि,पंडित और रणधीर कौन है ?

उ०—सोइ कवि पंडित सोइ रनधीरा ;
जो छल छाँडि भजै रघुबीरा (उ०)

प्र०—श्रीराम,ब्रह्मा,विष्णु,महेश आदि किसके वश में होते हैं ?

उ०—मन-क्रम-बचन-कपट तजि जो कर भूसुर-सेव ;
मोहिं-समेत बिरंचि सिव बस ताके सब देव ।

सुनु मुनि संतन्ह के गुन कहऊँ ; जिन्हते मैं उनके बस रहऊँ
कामादिक मद दंभ न जाके ; तात निरंतर बस मैं ताके (आं०)
मंत्र परम लघु जासु बस बिधि हरि हर सुर सर्ब । (बा०)

प्र०—सब देवता किसके ऊपर अनुकूल रहते हैं ?

उ०—सानुकूल तेहि पर सब देवा; जो तजि कपट करै द्विजसेवा (उ०)

प्र०—श्रीरामजी के चरणारविंदों में अनुराग होने के लिये क्या उपाय है ?

उ०—प्रथमहि बिप्र-चरन अति प्रीती ;
निज-निज धरम-निरत स्रुति-नीती
यहिकर फल पुनि बिषय-बिरागा;तबममचरन उपजअनुरागा(आ०)

राम-चरन-रति जो चहै अथवा पद निरबान ;
भाव-सहित सो यह कथा करै स्रवन-पुट पान । (उ०)
तुलसी जो राम-पद चहत प्रेम, तो सेइय गिरि निरुपाधि नेम (विनय)
मन ते सकल बासना भागी ; केवल राम-चरन लय लागी (उ०)
जे यहि कथहि सनेह-समेता ; कहिहहिं सुनिहहिं समुझि सचेता
होइहहिं राम-चरन-अनुरागी ; कलि-मल-रहित सुमंगल-भागी बा०
कहत सुनत सत भाव भरत को ; सीय-राम-पद होय न रत को
होइ बिबेक मोह-भ्रम भागा ; तब रघुनाथ-चरन-अनुरागा (अ०)
कवनिउ जोनि अवध बस जोई ; राम-परायन सो फुर होई (उ०)

भरत-चरित करि नेम, तुलसी जे सादर सुनहिं ;
सीय-राम-पद प्रेम, अवसि होइ भव-रस-बिरति । (अ०)

बिनु सतसंग न हरि-कथा तेहि बिन मोह न भाग ;
मोह गए बिनु राम-पद होइ न दृढ़ अनुराग ।

गयउ मोर संदेह, सुनेउँ सकल रघुपति-चरित ;
भयउ राम-पद नेह, तव प्रसाद बायस-तिलक । (उ०)

प्र०—श्रीरामजी क्या करने से मिल सकते हैं ? उनको क्या प्रिय है ?

उ०—मिलहिं न रघुपति बिनु अनुरागा ;
किए जोग जप ज्ञान बिरागा (उ०)
रामहिं केवल प्रेम पियारा ; जान लेहु जो जाननिहारा (अ०)

प्र०—श्रीरामजी कब कृपा करते हैं ?

उ०—मन क्रम बचन छाँड़ि चतुराई ;
भजतहि कृपा करहिं रघुराई (बा०)

प्र०—श्रीरामजी स्वप्न में भी किस पर प्रसन्न नहीं होते ?

उ०—सिव-पद-कमल जिनहिं रति नाहीं ;
रामहिं ते सपनेहु न सोहाहीं (बा०)
सिव-द्रोही मम भगत कहावा ; सो नर मोहिं सपनेहु नहिं पावा (लं०)

प्र०—श्रीराम-भक्त के लक्षण क्या हैं ?

उ०—राम-भगत पर-हित-रत पर-दुख-दुखी दयाल (अ०)
बिनु छल बिस्वनाथ-पद नेहू ; राम-भगत कर लच्छन एहू (बा०)

प्र०—सब से बढ़कर रघुपति-ब्रत-धारी कौन है ?

उ०—सिव-सम को रघुपति-ब्रतधारी; बिनु अघ तजी सती अस नारी
पन करि रघुपति-भगति दृढ़ाई; को सिव-सम रामहिं प्रिय भाई (बा०)

प्र०—श्रीरामजी को विशेष प्रिय कौन है ?

उ०—ज्ञानी प्रभुहि बिसेष पियारा ; (बा०)
सब से अधिक दास पर प्रीती ; (उ०)
को सिव-सम रामहिं प्रिय भाई ;
कोउ नहिं सिव-समान प्रिय मोरे; अस बिस्वास तजहु जनि भोरे (बा०)
लिंग थापि बिधिवत करि पूजा; सिव समान प्रिय मोहिं न दूजा (लं०)

अनुज राज-संपति बैदेही ; देह-गेह परिवार-सनेही
सब नहिं प्रियमोहिं तुमहिंसमाना ; मृखा न कहउँ मोर यह बाना (उ.)
जनकसुताजगजननिजानकी; अतिसयप्रियकरुनानिधानकी बा.

प्र०—किनके विमुख होनें से राम-भक्ति नहीं मिलती ?

उ०—संकर-बिमुख भगति चह मोरी ; सो नारकी मूढ़ मति थोरी
संकर-प्रिय मम द्रोही सिव-द्रोही मम दास ;
ते नर करहिं कल्प भर घोर नरक महँ बास। (लं०)

प्र०—किनकी कृपा के विना राम-भक्ति प्राप्त नहीं होती ?

उ०—जेहि पर कृपा न करहिं पुरारी ;
सो न पाव मुनि भगति हमारी (बा०)
बिनु सिव-कृपा भगति रघुबर की पाय न कबहूँ पाइहै। (विनय)

प्र०—शिवजी की सेवा का क्या फल होता है ?

उ०—तिन्हकर सकल मनोरथ सिद्ध करहिं त्रिपुरारि। (कि०)
सिव-सेवा कर फल सुत सोई ; अबिरल भगति राम-पद होई (उ०)
[illegible]इ अकाम जो छल तजि सेई ; भगति मोर तेहि संकर देई(लं०)
औरउ एक गुपुत मत सबहिं कहउँ कर जोरि ;
संकर-भजन बिना नर भगति न पावइ मोरि। (उ०)

प्र०—श्रीरामेश्वर-दर्शन करने और उनपर गंगा-जल चढ़ाने से [क्य]ा फल मिलता है ?

उ०—जे रामेस्वर-दरसन करिहहिं ;
ते तनु तजि मम लोक सिधरिहहिं ।
जे गंगा-जल आनि चढ़ावहिं ; सो सायुज्य मुक्ति नर पावहिं (लं०)

प्र०—सब युग और सब काल में कौन ऐसा उपाय है जिसके करने से जीव शोक-रहित हो सकता है ?

उ०—चहुँजुगतीनकालतिहुँलोका;भएनामजपिजीवबिसोका(बा.)

प्र०—श्रीराम-कथा किन लोगों को फीकी लगती है ?

उ०—प्रभु-पद-प्रीति न सामुझिनीकी;तिन्हहिंकथा सुनि लागैफीकी
जे न भजहिं हरि नर-तनुपाई;जिनहिं न हरिहर सुजस सोहाई (अ.)

प्र०—श्रीराम-कथा किनको मधुर लगती है ?

उ०—हरिहर-पद-रति मति न कुतरकी ;
तिन्ह कहँ मधुर कथा रघुबर की (बा०)
राम-कथा के ते अधिकारी ; जिन्हके सतसंगति अतिप्यारी (उ०)

प्र०—श्रीराम-कथा सुनकर कौन लोग सराहते हैं ?

उ०—राम-भगति-भूषित जिय जानी ;
सुनिहहिं सुजन सराहि सुबानी (बा०)

प्र०—कलिकाल में लोक-परलोक में माता-पिता के समान वांछित फल देनेवाला कौन है ?

उ०—राम-नाम कलि अभिमत-दाता ;

हित परलोक लोक पितु-माता (बा०)

प्र०—भाई-भाई में कैसी प्रीति होनी चाहिए ?

उ०—भायप भलि चहु बंधु के जल माधुरी सुबास।

नर-नारायन-सरिस सुभ्राता; राम-लखन-सम प्रिय तुलसी के।

भाइहि भाई परम सप्रीती; सकल दोष-छल-बरजित प्रीती

राम करहिं भ्रातन पर प्रीती; नाना भाँति सिखावहिं नीती

बारहिते निज पति हित जानी; लछिमन राम चरन रति मानी (बा०)

प्र०—राजनीति और धर्म का मुखिया वा राजा कैसा चाहिए ?

उ०—मुखिया मुख सो चाहिए खान-पान कहँ एक;
पोसै पालै सकल अँग तुलसी सहित बिबेक।

राज-धरम सरबस इतनोई; जिमि मन माँह मनोरथ गोई

जासु राज प्रिय प्रजा दुखारी; सो नृप अवसि नरक-अधिकारी (अ०)

साम-दाम अरु दंड बिभेदा; नृप-उर बसहिं नाथ कह बेदा (लं०)

पंक न रेनु सोह असि धरनी; नीति-निपुन नृप कै जस करनी (कि०)

राज कि रहइ नीति बिनु जाने; अघ कि रहै हरि-चरित बखाने (उ०)

[और उत्तर-कांड में राम-राज्य का वर्णन देखो]

प्र०—राम-लीला करना उचित है या नहीं ?

उ०—मम लीला-रति अति मन माहीं। (आ०)

कागभुशुंडिजी ने स्वयं लीला की है, इससे करना उचित है। यथा—

खेलउँ तहाँ बालकन मीला ; करउँ सदा रघुनायक-लीला (उ०)

प्र०—ईश्वर और जीव भेद-रहित हो सकता है या नहीं ?

उ०—जो सबके रह ज्ञान एकरस ; ईस्वर जीवहि भेद कहहु कस (उ०)

नारि-नयन-सर जाहि न लागा ; घोर क्रोध तम निसि जो जागा

लोभ-पास नहिं गरल बँधाया ; सो नर तुम-समान रघुराया (कि०)

प्र०—श्रीनारदजी अपना विवाह करना चाहते थे, परंतु भगवान् ने क्यों नहीं करने दिया ? यथा—

राम जबहि प्रेरेहु निज माया ; मोहेउ मोहिं सुनहु रघुराया

तब विवाह चाहउँ मैं कीन्हा ; प्रभु केहि कारन करन न दीन्हा

उ०—सुनु मुनि तोहि कहउँ सह रोसा ;
भजहिं मोहिं तजि सकल भरोसा।

करउँ सदा तिन्हकी रखवारी ; जिमि सिसु-बाल राखु महतारी

अवगुन-मूल सूल-प्रद प्रमदा सब दुख-खानि ;
ताते कीन्ह निवारन मुनि मैं यह जिय जानि।
काम क्रोध लोभादि मद प्रबल मोह कै धार ;
तिन्ह महँ अति दारुन दुखद माया-रूपी नार। (आ०)

को जग काम नचाव न जेही।
सो माया सब जगहि नचावा। (उ०)

प्र०—कहहु तात केहि भाँति जानकी; रहति करति रच्छा सुप्रान की?
उ०—नाम-पाहरू दिवस-निसि ध्यान तुम्हार कपाट;
लोचन निज पद जंत्रिका प्रान जाहिं केहि बाट। (सुं०)
प्र०—को तुम तात कहाँ ते आए; मोहि परम प्रिय बचन सुनाए?
उ०—मारुत-सुत मैं कपि हनुमाना; नाम मोर सुनु कृपा-निधाना
दीनबंधु रघुपति कर किंकर। (उ०)
प्र०—अवध का प्रभाव कौन प्राणी जानता है?
उ०—अवध-प्रभाव जान तब प्रानी;
जब उर बसहिं राम धनु-पानी (उ०)
जासु हृदय-आगार बसहिं राम-सिय चापधर (बा०)
जब लगि उर न बसत रघुनाथा; धरे चाप सायक कटि भाथा (सुं०)
प्र०—यह किरीट दसकंधर केरा; आवत बालि-तनय के प्रेरा
तासु मुकुट तुम्ह चारि चलाए; कहहु तात कवनी बिधि पाए?
उ०—नीति धरम के चरन सोहाए; अस जिय जानि नाथ पहिं आए
धरम-हीन प्रभु-पद-बिमुख काल-बिबस दससीस;
आए गुन तजि रावनहि सुनहु कोसलाधीस।
परम चतुरता स्रवन सुनि बिहँसे राम उदार;
समाचार पुनि सब कहे गढ़ के बालिकुमार। (लं०)
प्र०—किसके राज्य में प्राणियों को त्रय-ताप नहीं व्यापता?

उ०—दैहिक दैविक भौतिक तापा; राम-राज्य काहुहि नहिं व्यापा (उ०)

प्र०—त्रय-ताप के दुस्सह दुःख से यदि छूटना चाहे, तो क्या उपाय करे ?

उ०—जासु नाम त्रय-ताप-नसावन ;
सो प्रभु प्रगट समुझि जिय रावन (सुं०)

सुभग सोन सरसीरुह-लोचन; बदन मयंक ताप-त्रय-मोचन

स्यामल गात सरोरुह-लोचन ; देखौं जाइ ताप-त्रय-मोचन

त्रिबिध ताप-त्रासक त्रिमुहानी ; राम सरूप - सिंधु समुहानी

सोइ सादर सर मज्जन करहीं ; महा घोर त्रय ताप न जरहीं (बा०)

तुम्ह कृपाल जापर अनुकूला ; ताहि न ब्याप त्रिबिध भव-सूला (सुं.)

जे नाथ करि करुना बिलोके त्रिबिध दुख ते निरबहे (उ०)

देहु भगति रघुपति अति पावनि ; त्रिबिध ताप भव-दाप-नसावनि

सुनु खगपति यह कथा पावनी ; त्रिबिध ताप भव-दाप-दावनी

खगपति राम-कथा मैं बरनी; स्वमति बिलास त्रास दुख हरनी (उ०)

पुनि देखु अवधपुरी अति पावनि; त्रिबिध ताप भव दोष-नसावनि (लं.)

बंदौं अवधपुरी अति पावनि; सरजू सरि कलि कलुष-नसावनि (बा०)

झरना झरहि सुधा-सम बारी ; त्रिबिध-ताप-हर त्रिबिध बयारी (अ०)

प्र०—हृदय से पाप-परिताप कैसे कटे ?

उ०—सादर मज्जन-पान किए ते ; मिटहि पाप-परिताप हिए ते

समन पाप-संताप सोक के ; प्रिय पालक परलोक लोक के (बा०)

सेवक-सेव्य भाव बिनु भव न तरे उरगारि ।

प्र०—भाव किसको कहते हैं ?-

उ०—भाव-बस्य भगवान, सुख-निधान करुना-भवन ;
तजि ममता मद मान, भजिय सदा सीता-रमन ।

जिन्हके रही भावना जैसी ; प्रभु-मूरति देखी तिन्ह तैसी
निज निज रुचि सब रामहि देखा ; कोउ न जान कछु मरम बिसेखा

प्र०—कलिकाल के कल्मष को नाश करनेवाली, परम पवित्र और सदा सुख देनेवाली कौन वस्तु है ?

उ०—बंदौं अवधपुरी अति पावनि ; सरजू-सरि कलि-कलुष-नसावनि

प्र०—इस मानस में अत्यंत पवित्र, उदार और वेद-पुराण का सार क्या है ?

उ०—एहि महँ रघुपति-नाम उदारा ; अति पावन पुरान-स्रुति-सारा
तीरथ अमित कोटि अति पावन ; नाम अखिल अघ-पुंज-नसावन
अब श्रीराम-कथा अति पावनि ; सदा सुखद दुख-पुंज-नसावनि
पूछहु राम-कथा अति पावनि ; सुख सनकादि संभु-मन-भावनि
अब प्रभु-चरित सुनहु अति पावन ; करत जे बन सुर-नर-मुनि-भावन
रघुपति-कृपा जथा-मति गावा ; मैं यह पावन चरित सोहावा
जासु पतित-पावन बड़ बाना ; गावहिं कबि स्रुति संत पुराना
पाई न गति केहि पतित-पावन राम भजु सुनु सठमना

जे न भजहिं असप्रभु भ्रम त्यागी ; ज्ञान-रंक नर मंद अभागी

प्र०—इस संसार में अभागी लोग कौन हैं ?

उ०—जे न भजहिं अस प्रभु भ्रम त्यागी;ज्ञान-रंक मतिमंद अभागी
सुनहु उमा ते लोग अभागी ; हरि तजि होहिं बिषय-अनुरागी
करत राज लंका सठ त्यागी ; होइहहिं जब कर कीट अभागी

प्र०—पंपा-सरोवर के निकट वृक्ष के नीचे विराजमान रामजी लक्ष्मण से क्या कहते हैं ?

उ०—बैठे परम प्रसन्न कृपाला ; कहत अनुज-सन कथा रसाला
बेद-पुरान सुनहिं मन लाई ; आपु कहहिं अनुजहि समुझाई
कहत अनुज-सन कथा अनेका ; भगति-बिरति-नृप-नीति-बिबेका
पंचबटी बर परन-कुटी तर कह कछु कथा पुनीता (कबि०)

प्र०—श्रीरामजी सबको कैसे नचाते और सब कैसे नाचते हैं ?

उ०—जग पेखन तुम्ह देखन-हारे ; बिधि-हरि-संभु-नचावन-हारे
उमा दारु-जोषित की नाईं ; सबहिं नचावत राम गोसाईं
जेहि पर कृपा करहिं जन जानी;कबि-उर-अजिर नचावहिं बानी
नट-मरकट इव सबहि नचावत ; राम खगेस बेद अस गावत
रूप-रासि नृप-अजिर-बिहारी ; नाचहिं निज प्रतिबिंब निहारी
सो माया सब जगहि नचावा ; जासु चरित लखि काहु न पावा
सोइ प्रभु भ्रू-बिलास खगराजा ; नाच नटी इव सहित समाजा

प्र०—मन वचन कर्म से विचार करके कौन उचित कार्य करना चाहिए?

उ०—मन क्रम बचन सो जतन बिचारहु; रामचंद्र कर काज सँवारहु

प्र०—देह-धारण करने का क्या फल है?

उ०—परमेश्वर का निष्काम भजन। यथा—

श्राम छाँह कर मानस-पूजा; तजि हरि-भजन काज नहिं दूजा
देह धरे कर यह फल भाई; भजिय राम सब काम बिहाई

मन क्रम बचन कपट तजि भजन करै निष्काम;

रामहि भजहि तात सिव धाता।

प्र०—श्रीरामजी का भजन किसको कभी नहीं भाता?

उ०—पापवंत कर सहज सुभाऊ; भजन मोर तेहि भाव न काऊ
सहज पाप-प्रिय तासम देहा; जथा उलूकहि तम पर नेहा

प्र०—जीव को स्वप्न में भी विश्राम कब तक नहीं होता?

उ०—तब लगि कुसल न जीव कहँ सपनेहु मन बिस्राम;

जब लगि भजत न राम कहँ सोक-धाम तजि काम।

कोउ बिस्राम कि पाव, तात सहज संतोष बिनु।

राम-भजन बिनु मिटहि न कामा।

प्र०—हृदय में काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि खल कब तक बास करते हैं?

उ०—जब लगि उर न बसत रघुनाथा ; धरे चाप सायक कटि भाथा

प्र०—श्रीरामजी का सहज स्वभाव क्या है और कौन-कौन जानते हैं ?

उ०—सरन गए प्रभु काहु न त्यागा ; बिस्व-द्रोह जेहि कृत अघ लागा

सत्य कहौं मेरो सहज सुभाऊ ;
सुनहु सखा कपिपति लंकासन तुम सन कौन दुराऊ।
सब बिधि हीन दीन अति जड़ मति जाके कतहु न ठाऊ ;
आए सरन भजो न तजौं तेहि यह जानत ऋषिराऊ।(गीता०)

सुनहु सखा निज कहौं सुभाऊ ; जान भुसुंडि संभु गिरिजाऊ
सुनहु रामकर सहज सुभाऊ ; जन-अभिमान न राखहिं काऊ
ताते करहि कृपानिधि दूरी ; सेवक पर ममता अति भूरी
बेगि सो मैं डारिहौं उपारी ; प्रन हमार सेवक-हित-कारी
राम कहा सब कौसिक पाहीं ; सरल सुभाव छुआ छल नाहीं
ठाढ़ भए उठि सहज सुभाए ; ठवनि जुवा मृगराज लजाए
सहजहि चले सकल-जग-स्वामी ; मत्त मंजुवर कुंजर-गामी
उमा राम-सुभाव जिन्ह जाना ; ताहि भजन तजि भाव न आना
राम-सुभाव सुमिरि बैदेही ; मगन प्रेम तन-सुधि नहिं तेही
अस सुभाव कहुँ सुनउँ न देखौं ; केहिं खगेस रघुपति-सम लेखौं
सो सुग्रीव कीन्ह कपिराऊ ; अति कोमल रघुबीर-सुभाऊ

अति कोमल रघुबीर-सुभाऊ ; जद्यपि अखिल लोक कर राऊ
कोमल चित प्रभु दीनदयाला ; कारन बिनु रघुनाथ कृपाला

अस प्रभु दीनबंधु हरि कारन-रहित कृपाल ;
तुलसिदास सठ ताहि भजु छाँड़ि कपट जंजाल ।

सखा नीति तुम्ह नीक बिचारी ; मम पन सरनागत-भय-हारी

अभयं सर्व भूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतं मम ।

कोटि-बिप्र-बध लागहि जाहू ; आए सरन तजौं नहिं ताहू
ते सुनि सरन सामुहे आए ; सकृत प्रनाम किये अपनाए
निज कृत कर्म-जनित फल पायउँ ; अब प्रभु पाहि सरन तकि आयउँ
जासु सुभाव अरिहु अनुकूला ।
अरिहुक अनभल कीन्ह न रामा ।

कीन्ह मोह-बस द्रोह जद्यपि तेहिकर बध उचित ;
प्रभु छाँड़ेउ करि छोह को कृपाल रघुबीर-सम ।

गई बहोरि गरीब-नेवाजू ; सरल सबल साहेब रघुराजू (बा०)

गई वेद गिरि भूमि गइ सूकर गई बहोर ;
दीनबंधु नरसिंहजू बावन मृदु अति ओर ।
परसुराम अति सबल है साहेब सब पर राम ;
हिए धारि कटि कोप कर जंघ अंस अनुमान । (मा०म०)
गई बहोरि अहल्या रंक निषाद निवाज ;

सरल सेवरी खाइ फल गृध्र कृपा सुख साज।
साहेब रावन मारिकै फिर गइ राम-दोहाइ ;
लंक बिभीषन को दई अचल राज तव पाइ।

प्र०—सब साधन का सुफल क्या है ?

उ०—सब साधन कर सुफल सुहावा; लखन राम सिय दरसन पावा
प्रभु की कृपा भयउ सब काजू; जनम हमार सुफल भा आजू (कि०)
तेहि कर फल पुनि दरस तुम्हारा ; सहित सुभाग प्रयाग हमारा
मोरे मन प्रभु अस बिस्वासा ; राम तें अधिक रामकर दासा
सातों सम मोहिंमय जग देखा ; मोते अधिक संत करि लेखा
तुम्ह ते अधिक गुरुहि जिय जानी ;

तुलसी रामहि ते अधिक राम-भगत जिय जान ;
राम बाँधि उतरे उदधि लांघि गए हनुमान। (दो०)

प्र०—अनेकों जन्म से बिगड़ा हुआ प्राणी कैसे सुधरे ?

उ०—बिगरे जन्म अनेक जो सुधरे अब ही आज ;
होय राम के राम जपि तुलसी तजि कुसमाज। (दो०)
सुतदार अगार सखा परिवार तुलसी यह साज कुसाजहि रे। (कबि०)
बिगरे जनम अनेक सुधरे पल छिन एक। (विनय)

प्र०—जन्म, जीवन और मरण का यथार्थ फल किसने पाया है ?

उ०—जियन-मरन-फल दसरथ पावा ; अंड अनेक अमल जस छावा
जियत राम-बिधु-बदन निहारा ; राम-बिरह करि मरन सवाँरा

प्र०—साधु-सभा में बड़ा आदर किसका होता है ?

उ०—राम-सनेह सरस मन जासू ; साधु-सभा बड़ आदर तासू

प्र०—इस संसार में प्राणी भुवन-भूषण कब होता है ?

उ०—राम कीन्ह आपन जबहीं ते;भयउ भुवन-भूषन तबहीं ते (अ०)

प्र०—यथार्थ नीति-प्रीति और स्वार्थ-परमार्थ कौन जानते हैं ?

उ०—नीति-प्रीति परमारथ-स्वारथ ; कोउ न राम-सम जान जथारथ

प्र०—किसके दर्शन करने से विषाद नाश होता है ?

उ०—कामद गिरि भए राम-प्रसादा ; अवलोकत अपहरत बिषादा
राम सैल बन देखन जाहीं ; जहँ सुख सकल सकल दुख नाहीं

प्र०—लोक और परलोक में सुख का क्या उपाय है ?

उ०—बरनास्रम निज-निज धरम निरत बेद-पथ लोग ;
चलहिं सदा पावहिं सुखहिं नहिं भय सोक न रोग । (उ०)

जो परलोक इहाँ सुख चहहू ; सुनि मम बचन हृदय दृढ़ गहहू
सुलभ सुखद मारग यह भाई ; भगति मोर पुरान स्रुति गाई
कहहु भगति-पथ कवन प्रयासा;जोग न जप तप मख उपबासा
सरल सुभाव न मन कुटिलाई ; जथा-लाभ संतोष सदाई
भगति तात अनुपम सुख-मूला ; मिलै जो संत होहिं अनुकूला

अस बिचार जेइ कर सतसंगा ; राम-भगति तेहि सुलभ बिहंगा
सब-सुख-खानि भगति तैं माँगी;नहिं कोउ तोहि समान बड़भागी
भगति स्वतंत्र सकल-सुख-खानी ; बिनु सतसंग न पावहि प्रानी
संत-मिलन-सम सुख कछु नाहीं ।
ता कहँ यह बिसेख सुखदाई ; जाहि प्रानप्रिय श्रीरघुराई (उ०)
प्रथम भगति संतन्ह कर संगा ।

तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिय तुला इक अंग ;
तुलै न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग ।

तुलसिदास सब भाँति सकल सुख जो चाहत मन मेरो ;
तौ भजु राम काम सब पूरन करहि कृपानिधि तेरो ।(विनय)

तुलसी जो सदा सुख चाहिय तो रसना निसिबासर राम रटै;
रसना निसिबासर सादर सो तुलसी जपु जानकीनाथहिरे। (कबि०)

जपहि नाम जन आरत भारी ; मिटहि कुसंकट होहि सुखारी
फिरत सनेह-मगन सुख अपने ; नाम-प्रसाद सोच नहिं सपने
जो आनंद-सिंधु सुख-रासी ; सीकर ते त्रैलोक सुपासी
सो सुखधाम राम अस नामा ; अखिल लोक-दायक बिस्रामा
जेहि बिधि सुखी होहिं पुरलोगा ; करहिं कृपानिधि सोइ संजोगा
सुर-दुरलभ सुख करि जग माहीं; अंतकाल रघुपति-पुर जाहीं

बैदेहि रामप्रसाद तें जन सर्बदा सुख पावहीं ;

कल्यान काज बिवाह मंगल सर्बदा सुख पावहीं ।
राम सैल बन देखन जाहीं ; जहँ सुखसकल सकल दुख नाहीं
अब श्रीरामकथा अति पावनि ; सदा सुखद दुख-पुंज-नसावनि
मनकरि बिषय अनल बन जरई ; होइ सुखी जो यहि सर परई
जे सकाम नर सुनहिं जे गावहिं ; सुख-संपति नाना बिधि पावहिं
सुनहिं बिमुक्त बिरति अरु बिषई;लहहिं भगति गति संपति नितई
बिषयिन्हकहँपुनि हरिगुनग्रामा ; स्रवन-सुखद अरु मन-बिस्रामा
श्रीरघुनाथ-रूप उर आवा ; परमानंद अमित सुख पावा
प्रभु-सोभा-सुख जाने नयना;किमि कहिसकैतिनहिंनहिंबयना
सो सुख जाने मन अरु काना ; नहिं रसना पहिं जाइ बखाना
हरि-भगतन्ह देखहिं दोउ भ्राता ; इष्टदेव इव सब-सुख-दाता

नयन बिषय मोकहँ भयउ सो समस्त सुख-मूल ;
सबहिं सुलभ जग जीव कहँ भए ईस अनुकूल । (बा०)
वह सोभा समाज-सुख कहत न बनै खगेस ;
बरनै सारद-सेष-स्रुति सो रस जान महेस ।
जेहि सुख लागि पुरारि, असिव बेष कृत सिव सुखद ;
अवधपुरी नर-नारि, तेहि सुख महँ संतत मगन ।
अवधपुरी-बासिन्ह कर सुख-संपदा-समाज ;
सहस सेष नहिं कहि सकहिं जहँ नृप राम बिराज ।

राम-राज कर सुख-संपदा ; बरनि न सकहिं फनीस-सारदा

सुखी मीन रह एक रस अति अगाध जल माहिं ;
जथा धरमसीलन्ह कहँ दिन सुख-संजुत जाहिं ।

सुखी मीन जहँ नीर अगाधा ; जिमि हरि-सरन न एकौ बाधा

प्र०—श्रीराम-मिलन का साधन क्या है ?

उ०—मिलहि न रघुपति बिनु अनुरागा ; किए जोग जप ज्ञान बिरागा
जेहि के जेहिपर सत्य सनेहू ; सो तेहि मिलै न कछु संदेहू
मोरे जिय भरोस दृढ़ सोई ; मिलिहहिं राम सगुन सुभ होई

तुलसी कौनेउ जोग ते सतसंगति जब होइ ;
राम-मिलन संसय नहिं कहहि संत स्रुति सोइ । (सत०)

राम-चरन-मद राज-मद रहत घरी दुइ जाम ;
बिरह अमल उतरत नहीं जब लगि मिलहि न राम ।

इस प्रकार श्रीमानसरामायण-प्रश्नोत्तरार्थ-प्रकाश के उत्तरार्द्ध-भाग में कुछ सिद्धांत-संबंधी आवश्यक प्रश्न भी दिखला दिए गए । इनपर मनन करने से, आशा है, पाठकों के हृदय में श्रीगोसाईं तुलसीदासजी के मनोगत भावों का प्रकाश होगा ।

इति श्रीरामचंद्रार्पणमस्तु ।

श्रीसीतारामाभ्यां नमः
श्रीमते रामानंदाय नमः

अर्थ-पंचक-ज्ञान-प्रकाश

श्लोक

उपास्यरूपं तदुपासकस्य च
कृपाफलं भक्तिरसस्ततः परम् ;
विरोधिनो रूपमथैतदासे
ज्ञेया इमेऽर्था अपि पंच साधुभिः ।

दोहा

निज सरूप, पुनि राम को और कृपा-फल जोय ;
भक्ती-रस अरु भक्ति-अरि लखहु रैन-दिन सोय ।

छप्पै

भक्ति-मुक्ति की चाह बचन यह निश्चय मानो ;
पाँचों अर्थ बिचार नित्यप्रति मन में आनो ।
प्रथम लखो निज रूप बस्तु क्या हम हैं भाई ;
पुनि लख राम-सरूप, कृपा-फल पुनि सुखदाई ।
लखो भक्ति-रस-भेद जाहि बस हरि-सँग डोलो ;

जो रुचि होइ सो लेहु सुजन-हित कोमल बोलो।
भक्ति करत कर बिघ्न बिरोधी तेहि लखि लेहू;
तजहु तुरित तेहि संग राम-चरनन चित देहू।

दोहा

भक्ति प्रति सो कहत सब ज्यों श्रीप्रभु-पद होय;
रस प्रधान पाँचों तहाँ अब बरनत हौं सोय।
सांत, दास्य, बात्सल्य अरु सख्य, सृंगार अनूप;
एहि पंच-रस जानियो, पुनि बरनौं तेहि रूप।

छप्पै

स्वेत सांत रस, हरित दास्य मंजुल अति सोहै;
अरुन बरन बात्सल्य बिमल करुना करि जोहै।
सख्य पीत जग भक्त हृदय अति नेह भरो है;
ललित स्याम सृंगार सिंधु वाके मन मोहै।
जो श्रीप्रभु के मिलनो चहो गहो पंच में कोय;
अष्ट पहर सियराम भजो, पइहौ सुखनिधि सोय।
ज्यों नर में भूपाल सरित में गंग बखानो;
मृग मधि में मृगराज चंद्र उडुगन में जानो।
अखिल देव में राम जथास्रुति सूत्र बखानो;
एहि बिधि करहु बिचार रसिक रस को पहिचानो।

सांत दास्य बात्सल्य सुख यद्यपि सुखद अपार ;
सब रस के सिर-मुकुट-मनि राजत रस सृंगार।

दोहा

सुक्ल सांत, सृत हरित है, रस बात्सल्य सुलाल ;
सख्य पीत बर बरन मैं, स्याम सिंगार बिसाल।

छप्पै

धरा सान्त रस लसत दास पद पंकज राजै ;
हृदय सुभग बात्सल्य भुजा पर सख्य सुभ्राजै।
मुख-मयंक सृंगार राज रस अति सुख साजै ;
सब निज निज अस्थान लहत सुख अमित समाजै।

दोहा

पाँच मध्य मन जित रमै सुखद सर्ब-रस-सार ;
अष्ट पहर दंपति लखो तजो बिस्व-ब्योहार।

चौपाई

जो कोउ प्रभु सरनाम्रय आवै ; सो अन आस्रय सब छिटकावै
विधि निषेध की जे जे धर्मा ; सब को त्यागि रहे निसकर्मा
झूठ क्रोध निंदा तजि देही ; बिनु प्रसाद मुख अवर न लेही
सब जीवन पर करुना राखै ; कबहुँ कठोर बचन नहिं भाखै
मन माधुर्य रस माहिं समोवै ; पहर घरी पल बृथा न खोवै

सदगुरु के मारग पगु धारै; हरि-सदगुरु बिच भेद न पारै
एकादस लच्छन अवगाहै; जे जन परा परम पद चाहै
जाके दस सिद्धी अति दृढ़िहै; बिनु अधिकार कवन तहँ चढ़िहै
पहिले गुरु संतन्ह को सेवै; दूजे दया हृदय धरि लेवै
तीजै धर्म सुनिष्ठा गुनिहै; चौथे कथा अतृप्त है सुनिहै
पंचम पद-पंकज अनुरागै; षष्ठे राम-मंत्र जपि जागै
सप्तम हिरदै प्रेम बढ़ावै; अष्टम रूप ध्यान गुन गावै
नवमे दृढ़ता निश्चै गहिवै; दसमे रस की सरिता बहिवै
यह अनुकर्म करै अनुसरही; सनै सनै जग ते निर्बरही
अवध धाम साकेतहिं जावहिं; चार मुक्ति जेहिके मन भावहिं

दोहा

थोरे अच्छर अर्थ घन समुझहिं संत सुजान;
ज्यों चिंतामनि-महिमता परम जाहुरी जान।

इति अर्थ-पंचक-ज्ञान-प्रकाश समाप्त

श्रीरामचंद्रार्पणमस्तु

विषय-सूची

पूर्वार्द्ध

विषय	पृष्ठ
मंगलाचरण	१
ग्रंथ का आरंभ	२
रामचरितमानस की उत्पत्ति ...	३
चार घाटोंवाले मानस-सरोवर का वर्णन	४
उत्तर-घाट	४
पश्चिम-घाट	४
दक्षिण-घाट	४
पूर्व-घाट	५
चारों संवादों का पूर्वापर-क्रम ...	६
मानस के अंतर्गत ४१ प्रश्न ...	७
प्रयागराज में भरद्वाज-आश्रम ...	८
भरद्वाज-आश्रम की धर्म-सभा में श्रीयाज्ञवल्क्यजी का प्रवेश ...	८
श्रीयाज्ञवल्क्य से भरद्वाजजी का संशय	८
श्रीभरद्वाजजी का प्रश्न कि राम कौन हैं ?	९
श्रीयाज्ञवल्क्यजी का उत्तर ...	१०
श्रीपार्वती-प्रश्न	
१. क्या दशरथ-सुत राम ही अनादि निर्गुण ब्रह्म हैं ? ...	१२
२. निर्गुण ब्रह्म सगुन वपु वाला क्यों हुआ ?	२१
३. नर-तन किस हेतु धारण किया ?	२७
४. बालचरित कैसे किया ?	३५
५. किस प्रकार श्रीजानकीजी विवाही गईं ? ...	३८
६. किस दूषण से राज तज दिया ?	४५
७. वन में रहकर रामजी ने कौन-से अपार चरित किए ?	५०
८. किस प्रकार रावण को मारा ?	५५
९. राजगद्दी पर बैठकर श्रीरामजी ने क्या किया ? ...	५६
१०. श्रीरामजी किस प्रकार प्रजा-सहित अपने धाम गए ?	६०
११. किस तत्त्व में ज्ञानी, विज्ञानी और मुनि मग्न रहते हैं ?	६३
१२. भक्ति, ज्ञान, विज्ञान और वैराग्य क्या है ?	६६
१३. और भी अनेक रहस्य क्या हैं ?	७८
१४. जो मुझसे पूछने को रह गया हो, वह कहिए	८२
१५ कागभुशुंडि ने रामभक्ति कैसे पाई ? (इसी प्रश्न के अंतर्गत गरुड़जी का पहला प्रश्न है) ...	८४
१६. भुशुंडिजी को काग-शरीर किस कारण मिला ? (गरुड़-प्रश्न २)	८५
१७. कागभुशुंडिजी ने रामचरित कहाँ पाया ? (गरुड़-प्रश्न ३)	८६
१८. हे मदनारी ! आपने यह राम-चरित कैसे सुना ? ...	८८
१९. गरुड़ जैसे ज्ञानी ने मुनि-मंडली को छोड़कर कागभुशुंडि के मुँह से राम-कथा क्यों सुनी ?	८९

विषय	पृष्ठ
२०. भुशुंडि-गरुड़-संवाद कैसे हुआ? (गरुड़-प्रश्न ४) ...	६२
श्रीगरुड़-प्रश्न	
५. हे कृपालु भुशुंडिजी! आपको काल क्यों नहीं व्यापता?	६४
६. हे प्रभु भुशुंडिजी! आपके आश्रम में आने से मेरा मोह-भ्रम किस कारण दूर हो गया?	६५
७. ज्ञानी और भक्त में कितना अंतर है? ...	६५
८. हे मति-धीर! सब से दुर्लभ कौन शरीर है?	६७
६. सब से बड़ा दुःख कौन है?	६८
१०. भारी सुख कौन है? ...	६६
११. संत और असंतों का सहज-स्वभाव क्या है?	१००
१२. वेद-विदित विशाल पुण्य कौन है?	१०२
१३. परम कराल अघ कौन है?	१०३
१४. मानस-रोग कौन-कौन हैं?	१०४
श्रीलक्ष्मण-प्रश्न	
(१) ज्ञान, (२) वैराग्य, (३) भक्ति क्या हैं? (इनका उत्तर श्रीपार्वतीजी के १२वें प्रश्न के अंतर्गत आ गया है)...	६६
(४) माया क्या है? ...	१०६
(५ और ६) जीव और ईश्वर	१०७

उत्तरार्द्ध

विषय	पृष्ठ
१. बालकांड के आदि में ७ श्लोक क्यों लिखे गए? ...	१०६
२. राम-चरित-मानस में ७ ही सोपान क्यों हैं?	१०६
३. बालकांड के आरंभ में ५ सोरठाएँ लिखने का क्या हेतु?	११०
४. राम-नाम का प्रभाव कौन जानते हैं और उससे क्या फल मिलता है?	११०
५. मन-रूपी मुकुर में मल क्या है और वह कैसे छूट सकता है?	१११
६. किसका सुमिरन करने से दिव्य-दृष्टि होती है? ...	११२
७. सबको सुख और लोक परलोक में सद्गति देनेवाला कौन है?	११२
८. परमेश्वर का रूप हृदय में कब आवेगा?	११२
९. मोह-रूपी शत्रु को जीतने का क्या उपाय है? ...	११२
१०. श्रीरामजी कैसे वश होते हैं? और किसने उन्हें वश किया?	११३
११. ब्रह्म-सुख क्या है? गूढ़मति जानने का उपाय क्या है? ...	११३
१२. अणिमादिक सिद्धि पाने के साधन क्या हैं?	११३
१३. आरतजन के संकट कब मिटते हैं?	११३
१४. जगत् में कितने प्रकार के राम-भक्त हैं?	११३

विषय	पृष्ठ
१५. चारों भक्तों में प्रभु को विशेष प्यारा कौन है ? ...	११३
१६. सब चतुरों में शिरोमणि कौन है ?	११४
१७. रामजी कैसे रीझते हैं ? ...	११४
१८. रामजी ने अपने अनुरूप क्या किया ?	११४
१९. गोसाईंजी ने अपने भाषा-प्रबंध में संस्कृत-श्लोक क्यों मिलाए ?	११५
२०. पापों से मुक्त होने के विषय में वेद-पुराण क्या कहते हैं ?	११५
२१. कलिकाल में कपट, कुतर्क, दंभ, पाखंड सब कैसे नाश होसकते हैं ?	११६
२२. 'तेहि अवसर' में जन्म, बाल-लीला, विवाह और वन-वास कैसे हुआ ? ...	११६
२३. किसका सुमिरन करने से अज्ञान मिट जाता है ? ...	११७
२४. सहज-स्वरूप क्या है ? ...	११७
२५. त्रिकालदर्शी नारदजी ने मर्म क्यों नहीं जाना ? ...	११८
२६. कोटि योग जप साधन करने पर भी इच्छित फल क्यों नहीं मिलता ?	११८
२७. उमा-महेश्वर का चरित्र कैसा है ?	११८
२८. वेदों के कौन से परम धर्म की संतजन सराहना करते हैं ?	११९
२९. संतजन नित्य किसकी प्रशंसा करते हैं ? ...	११९

विषय	पृष्ठ
३०. श्रीशंकरजी किस रस में विराजकर कैसे शोभते हैं ? ...	११९
३१. श्रीपार्वतीजी श्रीमहादेवजी से कौन कथा पूछना चाहती हैं ?	११९
३२ श्रीरामचरित के गूढ़ रहस्य साधु-जन किससे कहते हैं ?	११९
३३. श्रीरामजी की माया कैसी और क्या करती है ? ...	१२०
३४. अतिशय प्रबल देव-माया कैसे छूटे ?	१२०
३५. किसके संकल्प सत्य होते हैं ?	१२१
३६. किसके मन में मोह होता है ?	१२१
३७. परमेश्वर का प्रण क्या है ?	१२१
३८. विश्रामदायक कौन है ?	१२१
३९. विश्व-भरण-पालन किसका नाम है ?	१२१
४०. किसके नाम का स्मरण करने से शत्रु का नाश होता है ?	१२२
४१. श्रीरामजी को प्यारा और समस्त सुलक्षण-संपन्न उदार नाम कौन है ?	१२२
४२. अवधपुर-वासियों के सुख-दाता कौन हैं ?	१२२
४३. ब्रह्मा ने किसको वंचित किया है ?	१२२
४४. किसका रूप देखते ही चराचर जीव मोहित हो जाते हैं ?	१२२
४५. सब नर-नारी किसको देखकर चकित होते हैं ? ...	१२३

विषय	पृष्ठ
४६. श्रीरामजी अवध-वासियों को कौन संयोग करते हैं ? ...	१२३
४७. श्रीरामजी प्रातःकाल उठकर क्या करते हैं ? ...	१२३
४८. विश्वामित्र अपने काम के वहाने दशरथ के घर क्या देखने आए ?	१२४
४९. ये दोनों सुंदर बालक कौन हैं ?	१२४
५०. अखिल ब्रह्मांड में सबसे अधिक शोभायमान कौन हैं ?	१२५
५१. श्रीरामजी और जानकीजी की समता-योग्य कौन है ?	१२५
५२. किसकी शोभा देखने-योग्य है ?	१२६
५३. सब प्राणियों के नयन-सुख-दाता कौन हैं ?	१२६
५४. किसकी छवि देखकर पलक नहीं लगती ?	१२६
५५. श्रीसीताराम की गौर-श्याम-जोड़ी कैसी शोभती है ? ...	१२६
५६. संसार में सबसे अधिक सुकृती और पुण्यवान् कौन है ?	१२६
५७. श्रीदशरथ नृप के चारों पुत्र कैसे शोभते हैं ? ...	१२६
५८. शोभा और सुकृती की सीमा कौन है ?	१२७
५९. श्रीजनकजी और दशरथजी के सुकृत के फल कौन हैं ?	१२७
६०. जनक और दशरथ के समान कोई हुआ या नहीं ? ...	१२७
६१. जनकपुर में जन्म लेनेवाले नर नारियों को सुकृत का फल क्या मिला ?	१२७
६२. जनकपुरवासियों को क्या लाभ हुआ ?	१२७
६३. लोचन-लाभ क्या हुआ ?	१२७
६४. भाग्यवान् कौन है ? ...	१२७
६५. सिंदूर-दान के समय श्रीरामसीता कैसे शोभते हैं ? ...	१२८
६६. जन्म-मरण से छूटने का सुगम उपाय क्या है ? ...	१२८
६७. नाम की क्या महिमा है ?	१२९
६८. रूप किसे कहते हैं ? ...	१२९
६९. लीला क्या है ? ...	१३०
७०. धाम किसे कहते हैं ? ...	१३१
७१. सत्ययुग में संसार-बंधन से छूटने का क्या उपाय होता था ?	१३१
७२. त्रेता में क्या उपाय थे ?	१३१
७३. द्वापर में क्या उपाय थे ?	१३१
७४. कलिकाल में क्या उपाय है ?	१३२
७५. कौन लोग भवसागर में नहीं पड़ते हैं ?	१३३
७६. कौन लोग भवसागर में पड़ते हैं ?	१३३
७७. संसार में क्या करने से यश और क्या करने से अपयश होता है ?	१३३
७८. किसकी भक्ति विना जीव सुख नहीं पा सकता ? ...	१३३
७९. किसके विमुख होने से जीव सुख नहीं पाता ? ...	१३४
८०. जन्म-मरणादि संसार-बंधन से जीव कैसे छूट सकता है ?	१३[illegible]

विषय	पृष्ठ
८१. किनके लिये जगत् में कोई वस्तु दुर्लभ नहीं है ? ...	१३४
८२. संसार में सबसे दुर्लभ क्या है ?	१३४
८३. जगत् में नर-तन पाकर सबसे बड़ी हानि क्या है ? ...	१३५
८४. काल-धर्म किसको नहीं व्यापता है ?	१३५
८५. किसको कोई विघ्न नहीं व्यापता है ?	१३५
८६. गुणज्ञ और बड़भागी कौन है ?	१३५
८७. जगत् में चतुर-शिरोमणि कौन है ?	१३५
८८. भक्ति-रूपी मणि किसको प्राप्त होती है ?	१३६
८९. पराई निंदा करने का क्या फल है ?	१३६
९०. सबसे बड़ा लाभ क्या है जिसे वेद-पुराण बताते हैं ?	१३६
९१. जीव का स्वार्थ क्या है ?	१३७
९२. परम परमार्थ क्या है ?	१३७
९३. शोचनीय कौन है और कौन नहीं ?	१३७
९४. धर्म-परायण कौन है !	१३८
९५. कवि, पंडित और रणधीर कौन है ?	१३८
९६. श्रीराम, ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि किसके वश में होते हैं ?	१३८
९७. सब देवता किसके अनुकूल रहते हैं ?	१३८
९८. श्रीराम के चरणारविंदों में अनुराग होने का क्या उपाय है ?	१३८
९९. श्रीरामजी क्या करने से मिल सकते हैं ? उनको क्या प्रिय है ?	१३९
[illegible]. श्रीरामजी कब कृपा करते हैं ?	१४०
[illegible]१. श्रीरामजी स्वप्न में भी किस पर प्रसन्न नहीं होते ?	१४०
१०२. श्रीराम-भक्त के लक्षण क्या हैं ?	१४०
१०३. सबसे बढ़कर रघुपति-व्रत-धारी कौन है ?... ...	१४०
१०४. श्रीरामजी को विशेष प्रिय कौन है ?	१४०
१०५. किनके विमुख होने से राम-भक्ति नहीं मिलती ...	१४१
१०६. किनकी कृपा बिना राम-भक्ति प्राप्त नहीं होती ? ...	१४१
१०७. शिवजी की सेवा का क्या फल होता है ?	१४१
१०८. श्रीरामेश्वर-दर्शन करने और उन पर गंगाजल चढ़ाने से क्या फल मिलता है ?	१४१
१०९. सब युग और सब काल में कौन ऐसा उपाय है जिसके करने से जीव शोक-रहित हो सकता है ? ...	१४२
११०. श्रीराम-कथा किन लोगों को फीकी लगती है ? ...	१४२
१११. श्रीराम-कथा किनको मधुर लगती है ? ...	१४२
११२. श्रीराम-कथा सुनकर कौन सराहते हैं ? ...	१४२
११३. कलिकाल में लोक-परलोक में माता-पिता के समान वांछित फल देनेवाला कौन है ?	१४२

विषय	पृष्ठ
११४. भाई-भाई में कैसी प्रीति होनी चाहिए ? ...	१४३
११५. राजनीति और धर्म का मुखिया या राजा कैसा चाहिए ?	१४३
११६. राम-लीला करना उचित है या नहीं ?	१४३
११७. ईश्वर और जीव भेद-रहित हो सकता है या नहीं ?	१४४
११८. श्रीनारदजी को भगवान् ने ब्याह क्यों नहीं करने दिया ?	१४४
११९. हे तात ! जानकी किस प्रकार प्राणों की रक्षा करती रहती है ? ...	१४५
१२०. हे तात ! तुम कौन हो ? कहाँ से आए हो ? ...	१४५
१२१. अवध का प्रभाव कौन प्राणी जानता है ? ...	१४५
१२२. रावण के चार मुकुट श्री रामजी के पास कैसे आए?	१४५
१२३. किसके राज्य में प्राणियों को त्रय-ताप नहीं व्यापता?	१४५
१२४. त्रय-ताप के दुख से छूटने का क्या उपाय है ? ...	१४६
१२५. हृदय से पाप-परिताप कैसे कटे	१४६
१२६. भाव किसको कहते हैं ? ...	१४७
१२७. कलि-कलुष-नाशिनी परम-पवित्र क्या है ? ...	१४७
१२८. इस मानस में परम पवित्र, उदार और वेद-पुराणका सार क्या है ?	१४७
१२९. इस संसार में अभागी लोग कौन हैं ?	१४[illegible]
१३०. पंपा-सरोवर के निकट श्रीराम-जी ने लक्ष्मणजी से क्या कहा था ?	१४८
१३१. श्रीरामजी सबको कैसे नचाते और सब कैसे नाचते हैं ?	१४८
१३२. मन, वचन, कर्म से विचार करके कौन उचित कार्य करना चाहिए ? ...	१४९
१३३. देह धारण करने का क्या फल है ?	१४९
१३४. श्रीरामजी का भजन किसको नहीं भाता ? ...	१४९
१३५. जीवको स्वप्न में भी विश्राम कब तक नहीं होता ?	१४९
१३६. हृदय में काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि खल कब तक बास करते हैं ? ...	१४९
१३७. श्रीरामजी का सहज स्वभाव क्या है ? और कौन-कौन जानते हैं ? ...	१५०
१३८. सब साधन का सुफल क्या है?	१५२
१३९. अनेकों जन्म से बिगड़ा हुआ प्राणी कैसे सुधरे ? ...	१५२
१४०. जन्म, जीवन और मरण का यथार्थ फल किसने पाया है ?	१५२

विषय	पृष्ठ
१४१. साधु-सभा में बड़ा आदर किसका होता है ? ...	१५३
१४२. इस संसार में प्राणी भुवन-भूषण कब होता है ? ...	१५३
१४३. यथार्थ नीति-प्रीति और स्वार्थ-परमार्थ कौन जानते हैं ?	१५३
१४४. किसके दर्शन करने से विषाद नाश होता है ? ...	१५३
१४५. लोक और परलोक में सुख का क्या उपाय है ? ...	१५३
१४६. श्रीराम-मिलन का साधन क्या है ?	१५६
अर्थ-पंचक-ज्ञान-प्रकाश ...	१५७

इस ग्रंथ में उद्धृत हुए ग्रंथों के सांकेतिक वर्ण

बा०—बालकांड
अ०—अयोध्याकांड
आ०—आरण्यकांड
कि०—किष्किन्धाकांड
सु०—सुंदरकांड
लं०—लंकाकांड
उ०—उत्तरकांड
मा० मू०—मानस मूल
मा० म०—मानसमयंक
मा०त०प्र०—मानसतत्त्वप्रकाश
अ० वे०—अथर्व वेद
वै०स०—वैराग्यसंदीपनी
ध्या०मं०—ध्यानमंजरी
तु०स०—तुलसी-सतसई
वि०सा०—विश्रामसागर
वि०प०—विनयपत्रिका
गी०गीता०—गीतावली
दो०—दोहावली
क०—कवितावली
छ०रा०—छप्पयरामायण
ब०रा०—बरवै रामायण
सत्यो०—सत्योपाख्यान
अ०दी०—अभिप्रायदीपक
वाल्म०—वाल्मीकि रामायण
र०गु०द०—रघुवंशगुणदर्पण

श्रीमद्भगवद्गीता

श्रीमद्भगवद्गीता और रामचरित मानस; दोनों हिंदू-धर्म के चमत्कारिक ग्रंथ हैं। कौन ऐसा धर्मवान् हिंदू होगा जिसके घर में ये दोनों ग्रंथ विराजमान न हों। गीता के विषय में कहा है कि "गीता सुगीता कर्तव्या किमन्यत् शास्त्र-विस्तरैः" अर्थात् यदि गीता-शास्त्र को भली भाँति पढ़ और समझ लिया है, तो फिर और शास्त्रों को पढ़ने की क्या ज़रूरत है? कहते हैं कि गीता के एक अक्षर का भी जहाँ विचार होता है, वहाँ किसी प्रकार की बाधा नहीं आती। स्वयं भगवान् ही ने कहा है कि "स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात्" अर्थात् यदि थोड़ा भी इस धर्म का आचरण करते बने, तो मनुष्य एक महान् भय से छूट जाता है। हमारे यंत्रालय में अनेक प्रकार से यह पवित्र ग्रंथ छापा गया है जिनका ब्योरा नीचे दिया जाता है। इनमें से जो आपको पसंद हों, उसे मँगाकर पढ़िए।

भगवद्गीता (सटीक)—बाबू ज़ालिमसिंह-कृत। पृष्ठ-संख्या ८७५, मूल्य ३)

भगवद्गीता (सटीक)—स्वामी आनंदगिरिजी-कृत। पृष्ठ-संख्या ४१४, मू० १।)

भगवद्गीता (सटीक)—पं० सूर्यदीनजी सुकुल-कृत। पृष्ठ-संख्या ४००, मू० १।=)

भगवद्गीता (सटीक)—मुं० हरिवंशलाल-कृत। पृष्ठ-संख्या १७८, मू० ।।-)

भगवद्गीता (सटीक)—पं० गिरिजाप्रसाद द्विवेदी-कृत। पृष्ठ-संख्या १३६, मू० १)

भगवद्गीता पंचरत्न (मूल)—गीता, विष्णुसहस्रनाम, भीष्मस्तवराज, अनुस्मृति, गजेंद्रमोक्ष—ये पाँच रत्न हैं। अक्षर मोटे। पृष्ठ-संख्या ५४० जिल्द बँधी हुई मू० १)

श्रीरामगीता

रामगीता (सटीक)— बाबू ज़ालिमसिंह-कृत। पृष्ठ-संख्या १८४, मू० १)

रामगीता (सटीक)—पं० सूर्यदीनजी सुकुल-कृत। पृष्ठ-संख्या ७३, मू० –)।।।

रामगीता (सटीक)—पं० गिरिजाप्रसादजी तथा माणिकचंदजी-कृत। पृष्ठ-संख्या ५८, मू० =)

रामगीता (सटीक-छप्पय)—पं० वेणीरामकृत। पृष्ठ-संख्या ३०, मू० –)।।।

मँगाने का पता—

मैनेजर नवलकिशोर-प्रेस, लखनऊ

This PDF you are browsing is in a series of several scanned documents from the Chambal Archives Collection in Etawah, UP

The Archive was collected over a lifetime through the efforts of Shri Krishna Porwal ji (b. 27 July 1951) s/o Shri Jamuna Prasad, Hindi Poet. Archivist and Knowledge Aficianado

The Archives contains around 80,000 books including old newspapers and pre-Independence Journals predominantly in Hindi and Urdu.

Several Books are from the 17th Century. Atleast two manuscripts are also in the Archives - 1786 Copy of Rama Charit Manas and another Bengali Manuscript.Also included are antique painitings, antique maps, coins, and stamps from all over the World.

Chambal Archives also has old cameras, typewriters, TVs, VCR/VCPs, Video Cassettes, Lanterns and several other Cultural and Technological Paraphernelia

Collectors and Art/Literature Lovers can contact him if they wish through his facebook page